



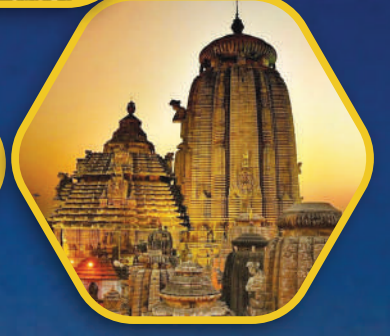
सत्यमेव जयते

108 वां अंक | अवधि : छमाही
(अक्टूबर 2024 - मार्च 2025)



SUPREME AUDIT INSTITUTION OF INDIA
लोकहितार्थ सत्यनिष्ठा
Dedicated to Truth in Public Interest

तोशाली



कार्यालय : प्रधान महालेखाकार (लेखा एवं हक्दारी)
ओडिशा, भुवनेश्वर - 751001



दिनांक : 10.03.2025 को भारत के नियंत्रक एवं महालेखापरीक्षक महोदय द्वारा कार्यालय का दौरा



दिनांक : 25.02.2025 को भुवनेश्वर में आयोजित कोषागार अधिकारियों का सम्मेलन



तोशाली

अंक - 108 (अक्टूबर 2024 - मार्च 2025) अवधि - छमाही

ओडिशा के मंदिर एवं स्थापत्यकला विशेषांक

कार्यालय : प्रधान महालेखाकार (लेखा एवं हकदारी)
ओडिशा, भुवनेश्वर - 751001



तोशाली

पत्रिका परिवार

मुख्य संरक्षक

श्री डी. साहु

प्रधान महालेखाकार

संरक्षक

श्री विकास कुमार

उप महालेखाकार (लेखा एवं वीएलसी, प्रशासन, निर्माण लेखा)

मार्गदर्शक

श्री संजय कुमार

उप महालेखाकार (निधि एवं पेंशन)

संपादक

सुश्री कीर्ति श्री

सहायक निदेशक (राजभाषा)

सहयोग

सुश्री रूपा कुमारी, वरिष्ठ अनुवादक

सुश्री सुनीता देवी, कनिष्ठ अनुवादक

श्री शिवानंद, कनिष्ठ अनुवादक

सुश्री अनिता दास, कनिष्ठ अनुवादक

श्री अजय कुमार साव, कनिष्ठ अनुवादक

आवरण चित्र : कोणार्क सूर्य मंदिर

ध्यातव्य : पत्रिका में प्रकाशित सभी रचनाएं रचनाकारों के व्यक्तिगत विचार व भावनाएं हैं, कार्यालय व संपादक मंडल का इनसे सहमत होना आवश्यक नहीं है।



मुख्य संरक्षक की कलम से...

ओडिशा भारत के प्राचीनतम राज्यों में से एक है। यहां के स्मारक और प्राचीन मंदिर न सिर्फ ओडिशा की अद्भुत स्थापत्य कला को दर्शाते हैं बल्कि ओडिशा की बहु-संस्कृति को भी अभिव्यक्त करते हैं। ओडिशा राज्य को कई नामों से जाना जाता था। कलिंग, उत्कल, उत्करात, ओड्र, ओद्र, ओड्रदेश, औड्राष्ट्र, त्रिकलिंग, दक्षिण कोशल, कंगोद, तोषाली, छेदि तथा मत्स आदि नाम समय-समय पर ओडिशा के ही रहे हैं। “तोषाली” या “तोशाली” भी इनमें से एक है।

मुझे यह जानकर अत्यंत हर्ष हो रहा है कि कार्यालय प्रधान महालेखाकार (लेखा एवं हकदारी), ओडिशा, भुवनेश्वर द्वारा छमाही पत्रिका “तोशाली” के 108वें अंक का प्रकाशन किया जा रहा है। रचनात्मकता, कल्पना, शोध एवं विचारों को उड़ान देती कार्यालयीन पत्रिका “तोशाली” का निरंतर प्रकाशन अपने आप में एक बड़ी उपलब्धि है। यह कार्मिकों की हिंदी भाषा के प्रति रुझान को बढ़ाने एवं राजभाषा हिंदी में अधिक से अधिक काम करने हेतु एक प्रेरक माध्यम है। रचना के दौरान कार्मिक हिंदी लिखने एवं पढ़ने की प्रक्रिया से गुजरते हैं और इससे भाषा के प्रयोग में उनकी दक्षता बढ़ती है। पत्रिका के इस अंक की विषय-वस्तु “ओडिशा के मंदिर एवं स्थापत्यकला” पर आधारित है जिससे पाठकों को मंदिरों के शहर, भुवनेश्वर सहित राज्य के विविध मंदिरों के वास्तु, बनावट, अद्भुत निर्माण-शैली एवं उनकी रहस्यमयी ऐतिहासिक पृष्ठभूमि के दर्शन अवश्य होंगे।

विभिन्न विधाओं से सजी ओडिशा के मंदिरों की गाथा इस पत्रिका को शोधपूर्ण, वैचारिक एवं ज्ञानवर्धक बनाती है जिसमें हमारे पत्रिका प्रकाशन परिवार के संपादक मंडल एवं सभी रचनाकारों की महत्वपूर्ण भूमिका है। राजभाषा हिंदी की प्रगति पर केंद्रित “तोशाली” के सफल प्रकाशन के लिए सभी बधाई के पात्र हैं। मुझे आशा है कि यह पत्रिका अपने लक्षित उद्देश्य को पूरा करेगी और कार्यालय में राजभाषा के प्रचार-प्रसार में सहायक बनेगी। मेरी शुभकामना है कि पत्रिका उत्तम आलेखों एवं कर्मियों की रचनात्मकता को समाहित करते हुए अनवरत प्रकाशित होती रहे।

“तोशाली” पत्रिका के स्वर्णिम भविष्य के लिए मेरी हार्दिक शुभकामनाएं।

डी. साहु

(डी. साहु)

प्रधान महालेखाकार



संरक्षक की लेखनी से...



राष्ट्र की एकता की प्रतीक राजभाषा हिंदी आज विश्व पटल पर प्रयुक्त हो रही है। यूनेस्को की राजकाज की नौ भाषाओं में हिंदी भी शामिल है। इस उपलब्धि में सभी भारतीयों का योगदान है जिन्होंने हिंदी के आधिकारिक प्रयोग एवं प्रसार में अपनी महत्वपूर्ण भूमिका निभायी है। हिंदी पत्रिकाएं हिंदी लिखने, पढ़ने एवं बोलने वालों को विचारों के संप्रेषण का एक मंच उपलब्ध कराती हैं। साथ ही, हिंदी पत्रिकाएं कार्यालय की गतिविधियों, सृजनशीलता, उपलब्धियों को अभिव्यक्त करने का एक सशक्त माध्यम हैं। हमारे कार्यालय द्वारा हिंदी पत्रिका “तोशाली” के 108वें अंक में ओडिशा की सभ्यता एवं संस्कृति के अंतर्गत “मंदिरों एवं उनकी स्थापत्यकला” पर केंद्रित जानकारी का सुंदर समावेश किया गया है।

आशा है “तोशाली” का यह अंक आपको पसंद आयेगा। पत्रिका के इस अंक के सफल प्रकाशन पर सभी सहयोगियों को बधाई, आभार।

जयतु हिंदी! जयतु भारत!

(विकास कुमार)

उप महालेखाकार

(लेखा एवं वीएलसी, प्रशासन, निर्माण लेखा)



संदेश...



राजभाषा हिंदी न केवल भारत की पहचान और सांस्कृतिक एकता का प्रतीक है बल्कि यह वैश्विक मंच पर भी अपनी महत्वपूर्ण उपस्थिति दर्ज करा रही है। बदलते समय के साथ हिंदी भाषा का प्रभाव साहित्य, प्रशासन, संचार और तकनीकी जगत में निरंतर बढ़ता जा रहा है। आज हिंदी केवल भारत तक सीमित नहीं है, बल्कि विश्वभाषा के रूप में स्थापित हो रही है।

इस गौरवपूर्ण संदर्भ में, “ओडिशा के मंदिर एवं स्थापत्यकला” पर आधारित हमारे कार्यालय द्वारा राजभाषा हिंदी पत्रिका “तोशाली” के 108वें अंक का प्रकाशन एक सराहनीय प्रयास है। ओडिशा की पावन भूमि में स्थित पुरी का जगन्नाथ मंदिर, कोणार्क का सूर्य मंदिर, भुवनेश्वर का लिंगराज मंदिर इत्यादि न केवल आध्यात्मिक केंद्र हैं, बल्कि ये हमारी स्थापत्यकला और सांस्कृतिक विरासत के अमूल्य प्रतीक भी हैं। इन मंदिरों की भव्यता, ऐतिहासिक महत्व, स्थापत्य कला और आध्यात्मिक आस्था को हिंदी के माध्यम से व्यापक स्तर पर प्रस्तुत करना निश्चय ही एक उल्लेखनीय पहल है। यह अंक न केवल हिंदी भाषा के प्रचार-प्रसार को बढ़ावा देगा, बल्कि ओडिशा की गौरवशाली धरोहर को पाठकों तक पहुंचाने में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाएगा।

मैं “तोशाली” पत्रिका के इस अंक से जुड़े संपादक मंडल के सभी सदस्यों, लेखकों और योगदानकर्ताओं को हार्दिक बधाई देता हूँ। मुझे आशा है कि “तोशाली” पत्रिका का यह अंक भी पूर्व अंकों की भांति सभी पाठकों के लिए ज्ञानवर्धक और प्रेरणादायक सिद्ध होगा तथा राजभाषा हिंदी के विकास में सकारात्मक योगदान देगा।

(संजय कुमार)

उप महालेखाकार (निधि एवं पेंशन)



संपादकीय...

भाषा मानव समाज की अमूल्य सांस्कृतिक धरोहर है। भाषा ही मानव समूह को समाज का समष्टि रूप देती है। किसी समाज के संचित ज्ञान, विचार एवं भावनाओं की अभिव्यक्ति उनकी भाषा से ही संभव है।

प्राचीन भारतीय सभ्यता भाषायी दृष्टि से काफी समृद्ध है। इन भाषाओं ने निरंतर अपने साहित्य एवं ज्ञान-भंडार में वृद्धि की है। आधुनिक भारत में हिंदी राजभाषा के रूप में देश का प्रतिनिधित्व करती है। हिंदी आज विश्व पटल पर भी अपनी महत्ता को निरंतर सिद्ध कर रही है। संयुक्त राष्ट्र संघ से लेकर विश्व के प्रतिष्ठित विश्वविद्यालयों तक हिंदी का परचम लहरा रहा है। ऐसे में कार्यालयीन हिंदी पत्रिकाओं का महत्व और भी बढ़ जाता है क्योंकि ये न केवल राजभाषा नीति के क्रियान्वयन में सहायक हैं बल्कि सरकारी कार्यालयों में हिंदी के प्रयोग को बढ़ावा देकर राष्ट्रीय एकता को भी मजबूती प्रदान करती हैं।

हमारे कार्यालय की हिंदी पत्रिका “तोशाली” राजभाषा की प्रगति की दिशा में हमारा अंशदान है। “तोशाली” के 108वें अंक में हम ओडिशा के मंदिर एवं उनकी अद्भुत वास्तुकला की अनुपम छटा को आपके समक्ष प्रस्तुत कर रहे हैं। ओडिशी संस्कृति, कला और शिल्प के विषय में अत्यंत समृद्ध है। हिंदू मंदिरों के साथ-साथ ओडिशा बौद्ध एवं जैन धर्मों की आश्रय स्थली भी रही है। ओडिशा के भव्य मंदिर न केवल धार्मिक आस्था के केंद्र हैं बल्कि कला, संस्कृति और इतिहास के जीवंत दस्तावेज भी हैं। विशेषकर कोणार्क का सूर्य मंदिर, पुरी का जगन्नाथ मंदिर और भुवनेश्वर का लिंगराज मंदिर जैसे स्थापत्य चमत्कार ओडिशा की समृद्ध विरासत को दर्शाते हैं। यहाँ की वास्तुकला “कलिंग शैली” का अनुपम उदाहरण है, जहाँ पत्थरों में तराशी गई कथाएँ भगवान जगन्नाथ की करुणा, सूर्यदेव की गतिशीलता और शिव की तांडव लीला को जीवंत कर देती हैं।

आशा है कि यह विशेषांक पाठकों को ओडिशा की भव्य मंदिर परंपरा से परिचित कराएगा और साथ ही हिंदी के प्रचार-प्रसार में एक महत्वपूर्ण योगदान देगा। पाठकों से अनुरोध है कि अपने बहुमूल्य विचारों एवं सुझावों से हमें अवश्य अवगत कराएं ताकि पत्रिका के आगामी अंकों को और भी अधिक उत्कृष्ट एवं समृद्ध बनाया जा सके।

सधन्यवाद...

(कीर्ति श्री)

सहायक निदेशक (राजभाषा)



भारत सरकार
गृह मंत्रालय
राजभाषा विभाग

(सदैव ऊर्जावान; निरंतर प्रयासरत)

राजभाषा प्रतिज्ञा

भारतीय संविधान के अनुच्छेद 343 और 351 तथा राजभाषा संकल्प 1968 के आलोक में हम केंद्र सरकार के कार्मिक यह प्रतिज्ञा करते हैं कि अपने उदाहरणमय नेतृत्व और निरंतर निगरानी से; अपनी प्रतिबद्धता और प्रयासों से प्रशिक्षण और प्राइज़ से अपने साथियों में राजभाषा प्रेम की ज्योति जलाये रखेंगे, उन्हें प्रेरित और प्रोत्साहित करेंगे; अपने अधीनस्थ के हितों का ध्यान रखते हुए; अपने प्रबंधन को और अधिक कुशल और प्रभावशाली बनाते हुए राजभाषा-हिंदी का प्रयोग, प्रचार और प्रसार बढ़ाएंगे हम राजभाषा के संवर्द्धन के प्रति सदैव ऊर्जावान और निरंतर प्रयासरत रहेंगे।

जय राजभाषा ! जय हिंद !

आपके पत्र



कार्यालय प्रधान महालेखाकार
(लेखापरीक्षा)
बिहार, वीरचंद पटेल मार्ग,
पटना - 800001

महोदय,

कार्यालयीन पत्रिका “तोशाली” के 107 वें अंक की ई-प्रति प्राप्त हुई। आपका हार्दिक आभार। यह अंक आदिवासी समाज के सभी पहलुओं से पाठकों का साक्षात्कार कराती है। पत्रिका में समाहित रचनाओं ने आदिवासी संसार के सभी पक्षों का व्यापक ज्ञानवर्धन कराया है। विशेषतः श्री विकास कुमार, का “ओड़िशा की समृद्ध जनजातीय परम्परा: एक परिचय” गागर में सागर के समान है। श्री संजय कुमार, उप महालेखाकार महोदय का “कर्म प्रधान विश्व करि राखा”, श्री चार ओराम जी का “आदिवासियों का कर्मा पर्व”, श्री महेंद्र कुमार शतपथी जी का “ओड़िशा के आदिवासी स्वतंत्रता सेनानी” तथा श्री गौरव यादव जी का “ओड़िशा के विशेष रूप से कमजोर जनजातीय समूह” प्रशंसनीय है।

सुश्री शुभश्री पात्रा जी की कविता “आदिवासी: क्या हम अलग हैं?” मानवीय दृष्टिकोण समेटे है।

सभी रचनाकारों एवं संपादक मंडल को पत्रिका को आदिवासी समाज जो कि भारत के मूलनिवासी हैं के ऊपर कई सारे लेख प्रस्तुत करने के लिए फिर से हार्दिक बधाई एवं पत्रिका की उत्तरोत्तर प्रगति के लिए शुभकामनाएँ।

वरिष्ठ लेखापरीक्षा अधिकारी/ हिंदी

कार्यालय महानिदेशक लेखापरीक्षा
(अवसंरचना)
नई दिल्ली, तृतीय तल,
ए-स्कन्ध, इंद्रप्रस्थ भवन,
इंद्रप्रस्थ एस्टेट, नई दिल्ली-110002

महोदय,

आपके कार्यालय द्वारा प्रकाशित राजभाषा हिंदी को समर्पित छमाही पत्रिका “तोशाली” की ई-प्रति सधन्यवाद प्राप्त हुई। पत्रिका का मुख्य पृष्ठ आकर्षक है। जैसा कि ओड़िशा जनजातीय जनसंख्या के मामले में देश में दूसरे स्थान पर है और जनजातीय विविधता से परिपूर्ण है; आपकी गृह पत्रिका के माध्यम से आपने ओड़िशा की कई महत्वपूर्ण जनजातियों के बारे में हमें अवगत कराया है जिसके लिए आपके पत्रिका परिवार को धन्यवाद। किसी विषय विशेष पर केंद्रित होकर पत्रिका संपादन करने का आपका प्रयास सराहनीय है।

राजभाषा हिंदी के प्रचार-प्रसार एवं पत्रिका के प्रकाशन हेतु आपका पत्रिका परिवार विशेष रूप से बधाई का पात्र है। “तोशाली” पत्रिका परिवार को पत्रिका की उत्तरोत्तर प्रगति एवं कुशल संपादन के लिए “संवाद” पत्रिका परिवार की ओर से अनेकानेक शुभकामनाएं।

हिंदी अधिकारी

कार्यालय महानिदेशक लेखापरीक्षा
(केंद्रीय व्यय)
ऑडिट भवन, इन्द्रप्रस्थ एस्टेट, नई
दिल्ली-110002

महोदय,

आपके कार्यालय के पत्र सं. रा.भा.अनु./
तो.प्र. एवं मा./12/2024-25/246 दिनांक
01.11.2024 के द्वारा आपके कार्यालय द्वारा
प्रकाशित राजभाषा हिंदी पत्रिका “तोशाली” के
107वें अंक की प्रति सधन्यवाद प्राप्त हुई। पत्रिका
में समाविष्ट सभी रचनाएँ उच्चस्तरीय, ज्ञानवर्धक
एवं प्रशंसनीय हैं। पत्रिका में समाविष्ट सुश्री रूपा
कुमारी का “प्रथम मानव एवं जंगल के राजा:
बैगा जनजाति”, श्री महेन्द्र कुमार शतपथी का
“ओडिशा के आदिवासी स्वतंत्रता सेनानी”, श्री
दीपक यादव का “वसुधैव कुटुंबकम्”, श्री कुमार
भास्कर का “ओडिशा की जनजातियाँ” एवं श्री
रबिन्द्र कुमार दास का “प्राथमिक चिकित्सा (फर्स्ट
एड) और उत्तरजीविता कौशल (सर्वाइवल
स्किल)” बहुत ही ज्ञानवर्धक लेख है।

पत्रिका के श्रेष्ठ संकलन हेतु संपादक मंडल
बधाई के पात्र हैं। पत्रिका के उज्ज्वल भविष्य
हेतु हार्दिक शुभकामनाएँ।

हिंदी अधिकारी

कार्यालय महालेखाकार
(लेखापरीक्षा-11)
म.प्र.,53, अरेरा हिल्स, होशंगाबाद रोड,
भोपाल-462011

महोदय/महोदया,

उपर्युक्त संदर्भित पत्र के साथ आपके
कार्यालय द्वारा “तोशाली” के 107वें अंक की
ई-प्रति प्राप्त हुई, तदर्थ धन्यवाद। पत्रिका में
सभी रचनाएँ प्रशंसनीय हैं विशेष तौर पर गंजाम
जिले की जनजातियाँ, प्रथम मानव एवं जंगल के
राजा: बैगा जनजाति, वन वनवासी तथा पॉलिथीन
की घास और कंकरीट के जंगल, ओडिशा के
विशेष रूप से कमजोर जनजातीय समूह, वसुधैव
कुटुंबकम्, आदि रचनाएँ सारगर्भित एवं सराहनीय
हैं।

पत्रिका की साज-सज्जा उत्तम हैं।
कार्यालयीन चित्रों ने पत्रिका की सुंदरता को और
निखारा है। पत्रिका के कुशल तथा सफल संपादन
हेतु संपादक मण्डल को हार्दिक बधाई। पत्रिका
के निरंतर उज्ज्वल भविष्य हेतु शुभकामनाएँ।

हिंदी अधिकारी/हिंदी कक्ष

कार्यालय महानिदेशक लेखापरीक्षा,
केंद्रीय व्यय,
पर्यावरण एवं वैज्ञानिक विभाग,
कोलकाता शाखा,
निजाम पैलेस, 234/4, एजेसी बोस रोड,
कोलकाता-020-700

महोदय,

आपके कार्यालय द्वारा प्रकाशित छमाही हिन्दी पत्रिका “तोशाली” के 107वें अंक की ई-प्रति प्राप्त हुई। सर्वप्रथम इसके लिए सहर्ष धन्यवाद। पत्रिका का आवरण पृष्ठ आकर्षक है तथा मुद्रण एवं प्रकाशन उत्तम है। संकलित समस्त लेख एवं रचनाएँ सरस एवं पठनीय हैं। विशेषकर विकास कुमार का आलेख “ओडिशा की समृद्ध जनजातीय परंपरा: एक परिचय”, रूपा कुमारी का आलेख “प्रथम मानव एवं जंगल के राजा: बैगा जनजाति”, दीपक यादव का आलेख “वसुधैव कुटुंबकम्”, आदर्श कुमार का आलेख “नारीवाद”, रविन्द्र कुमार दास का आलेख “प्राथमिक चिकित्सा (फर्स्ट एड) और उत्तरजीविता कौशल (सर्वाइवल स्किल)” और शांतिलता सेठी का आलेख “ओडिशा के डोंगरिया कौंध” अत्यन्त ही उत्कृष्ट एवं सराहनीय है।

पत्रिका के श्रेष्ठ संकलन हेतु संपादक मंडल के सभी सदस्य बधाई के पात्र हैं। आपके कार्यालय की हिन्दी पत्रिका “तोशाली” इसी तरह निरंतर प्रगति पथ पर अग्रसर रहे, यह हमारी शुभकामना है।

वरिष्ठ लेखापरीक्षा अधिकारी
(राजभाषा)

कार्यालय प्रधान महालेखाकार
(लेखापरीक्षा- I)
पश्चिम बंगाल, ट्रेडरी बिल्डिंग्स,
2, गवर्मेन्ट प्लेस (पश्चिम),
कोलकाता-700 001

महोदय/महोदया,

आपके कार्यालय का पत्रांक-
रा.भा.अनु./तो.प्र.एवं मा./12/2024-25/255,
दिनांक 01.11.2024 के माध्यम से आपके कार्यालय द्वारा प्रकाशित पत्रिका “तोशाली” की प्राप्ति हुई। धन्यवाद। पत्रिका का आवरण पृष्ठ सुंदर एवं आकर्षक है। “तोशाली” में समाहित सभी रचनाएं रोचक, प्रशंसनीय एवं ज्ञानवर्धक हैं। विशेष रूप से श्री दीपक यादव की रचना “वसुधैव कुटुंबकम्”, सुश्री रूपा कुमारी की रचना “प्रथम मानव एवं जंगल के राजा: बैगा जनजाति”, श्री संजय कुमार की रचना “कर्म प्रधान विश्व करि राखा”, इत्यादि सराहनीय हैं। आशा है कि यह पत्रिका हिन्दी के प्रचार-प्रसार के लिए उपयोगी सिद्ध होगी।

पत्रिका के सभी रचनाकारों एवं संपादक मंडल को पत्रिका के सफल प्रकाशन के लिए बधाई एवं पत्रिका के उतरोत्तर प्रगति की शुभकामनाएं।

हिन्दी अधिकारी



कार्यालय प्रधान महालेखाकार
(लेखापरीक्षा)
छत्तीसगढ़, रायपुर

महोदय/महोदया

आपके कार्यालय के द्वारा प्रकाशित अर्धवार्षिक हिंदी ई-पत्रिका “तोशाली” के 107वें अंक की ई पत्रिका प्राप्त हुई। पत्रिका का यह अंक भेजने हेतु आपका हार्दिक आभार। भेजी गई पत्रिका में संकलित सभी रचनाएँ पठनीय, रुचिकर एवं प्रेरणा दायक हैं। इस पत्रिका में सामाजिक जीवन से जुड़े विभिन्न पहलुओं पर प्रेरक एवं ज्ञानवर्धक लेख लिखे गए हैं।

राजभाषा हिन्दी के प्रचार-प्रसार में यह पत्रिका महत्वपूर्ण योगदान दे रही है। सभी रचनाकारों एवं संपादक मण्डल को पत्रिका के सफल प्रकाशन के लिए हार्दिक बधाई एवं पत्रिका की उत्तरोत्तर प्रगति के लिए शुभकामनाएँ।

वरिष्ठ लेखापरीक्षा अधिकारी
हिंदी कक्ष

कार्यालय महानिदेशक लेखापरीक्षा
उद्योग एवं कॉर्पोरेट कार्य, ऑडिट भवन,
आई.पी.एस्टेट, नई दिल्ली-110002

महोदय/महोदया,

आपके कार्यालय द्वारा प्रकाशित हिंदी पत्रिका “तोशाली” के 107वें अंक की ई-प्रति प्राप्त हुई, सहर्ष धन्यवाद। पत्रिका का मुख्य पृष्ठ अत्यंत आकर्षक है। पत्रिका में समाविष्ट सभी लेख, कविताएँ पठनीय एवं ज्ञानवर्धक हैं। श्री विकास कुमार, उप महालेखाकार की “ओडिशा की समृद्ध जनजातीय परंपरा : एक परिचय”, सुश्री रूपा कुमारी, वरिष्ठ अनुवादक की “प्रथम मानव एवं जंगल के राजा : बैगा जनजाति”, एवं श्री महेंद्र कुमार शतपथी, पर्यवेक्षक की “ओडिशा के आदिवासी स्वतंत्रता सेनानी” रचनाएँ विशेष रूप से प्रशंसनीय हैं। पत्रिका में संस्कृति एवं धार्मिकता का समिश्रण कार्मिकों की मौलिकता को दर्शाता है। पत्रिका में ओडिशा जनजाति की सभ्यता, संस्कृति कला एवं ज्ञान का प्रस्तुतीकरण विशेष रूप से उल्लेखनीय है।

पत्रिका के सभी रचनाकारों एवं संपादक मंडल को प्रकाशन हेतु हार्दिक बधाई एवं पत्रिका के उज्ज्वल भविष्य के लिए हमारे कार्यालय की ओर से हार्दिक शुभकामनाएँ।

संपादक एवं हिंदी अधिकारी



अनुक्रमणिका

क्र. सं. शीर्षक	रचनाकार	पृष्ठांक
1. समृद्ध भारतीय विरासत के प्रतीक: ओडिशा के मंदिर-एक परिचय	श्री विकास कुमार	13
2. कोणार्क सूर्य मंदिर	श्री संजय कुमार	16
3. ओडिशा राज्य के मंदिर और उनकी वास्तुकला	श्री कुमार भास्कर	19
4. ब्रह्मयामला तंत्र क्षेत्र बिरजा मंदिर	श्री दीप्ति रंजन राय	24
5. भुवनेश्वर का लिंगराज मंदिर और अनन्त वासुदेव मंदिर	श्री उमाकांत महासुआर	25
6. पुरी: जगन्नाथ का निवास	सुश्री शुभश्री पात्रो	27
7. शैव-वैष्णव प्रतीकात्मक मंदिर: लिंगराज	सुश्री रूपा कुमारी	28
8. कोणार्क का जन्म	श्री महेंद्र कुमार शतपथी	32
9. माँ तारा तारिणी	श्री मनोरंजन पाणिग्राही	35
10. माँ भट्टारिका मंदिर	सुश्री अनिता दास	37
11. परशुरामेश्वर मंदिर- वास्तुकला का एक उत्कृष्ट नमूना	श्री यशराज मिश्रा	40
12. गुप्तेश्वर महादेव	श्रीमती शान्तिलता सेठी	42
13. एकाम्र क्षेत्र के मंदिर : स्थापत्य एवं भक्ति का संगम	श्री प्रज्ज्वल उपाध्याय	43
14. ओडिशा: मंदिरों का घर	श्री शुभम पात्रो	47
15. ओडिशा के मंदिरों की स्थापत्यकला में बौद्ध, जैन और जनजातीय प्रभाव	श्री आलोक कुमार मौर्य	48
16. आदिवासियों की परंपराएँ	श्री चार ओराम	51
17. दिव्य अनुभूति	श्री दीपक यादव	53
18. माँ सारला मंदिर	श्री रबिन्द्र कुमार दास	56
19. जगन्नाथ पुरी जी के दर्शन	श्री शिवानंद	58
20. गुंडीचा मंदिर: आस्था का पवित्र केंद्र	श्री अजय कुमार साव	60
21. ओडिशा का मन : मंदिर	श्री अभिषेक कुमार	63
22. इस्कॉन मंदिर: भुवनेश्वर	सुश्री सुनीता देवी	66

समृद्ध भारतीय विरासत के प्रतीक: ओडिशा के मंदिर-एक परिचय

श्री विकास कुमार

उप महालेखाकार



यह एक सर्वविदित तथ्य है कि भारत की सभ्यता-संस्कृति की एक समृद्ध परम्परा हजारों वर्षों से निर्बाध चली आ रही है। अनेक आक्रांताओं ने भारतभूमि पर आक्रमण किया परंतु भारतीय इतिहास गाथा को मिटा न सके प्रत्युत यहाँ की संस्कृति में रच-बस कर स्वयं को अमर बनाया।

भारतीय विरासत की समृद्धि में एक प्रमुख कारक के रूप में मंदिरों की भव्यता एवं अनुपम शिल्प कला सदियों से साक्षी रही है। इसी कड़ी में ओडिशा के मंदिरों का भारतीय धर्म-दर्शन, सभ्यता-संस्कृति, स्थापत्य कला में विशिष्ट स्थान रहा है। यहाँ के मंदिर विश्व पटल

पर समृद्ध भारतीय विरासत के प्रतीक बने हैं।

यह सुखद संयोग ही कहा जा सकता है कि जब इन पंक्तियों के लेखक ने 22 जनवरी 2024 को मंदिरों के शहर के रूप में ख्यात भुवनेश्वर में वर्तमान कार्यालय में योगदान दिया उस दिन संपूर्ण भारतवर्ष त्रेता युगीन कोसल की राजधानी (अयोध्या) में भगवान राम के रामलला रूप मूर्ति की प्राण-प्रतिष्ठा के उत्सव पर अर्द्ध दिवसीय अवकाश में भाव-विभोर था। इस अवसर पर ओडिशा के समृद्ध मंदिरों की विरासत में एक और मंदिर का नाम जुड़ गया जब इसी दिन इसी प्रांत के नयागढ़ जिले में एक भव्य राम मंदिर का लोकार्पण हुआ। पहाड़ के शिखर पर बने फतेहगढ़ राम मंदिर को अब “ओडिशा

की अयोध्या” के रूप में जाने जाना लगा है। ओडिशा की राजधानी “भुवनेश्वर” को यदि “मंदिरों का शहर” कहा जाता है तो संपूर्ण ओडिशा प्रांत को “मंदिरों का प्रांत” कहे जाने पर कोई अतिशयोक्ति नहीं होनी चाहिए। 22 जनवरी 1808 को जन्मे प्रख्यात स्कॉटिश वास्तुशिल्पीय इतिहासकार

ने यह सच ही कहा था उड़ीसा (अब ओडिशा) में मंदिर, शेष भारत के सभी मंदिरों की कुल संख्या से ज्यादा हैं। इस तथ्य को हमारे पूर्ववर्ती अधिकारियों ने भी दोहराया था जिन्हें अपने संपूर्ण कार्यकाल में भी समस्त ओडिशा में स्थित प्रसिद्ध मंदिरों के दर्शन के

सौभाग्य से वंचित रहना पड़ा। भले किसी को ये मजाक की बातें लगे परंतु यह अकाट्य सत्य है। मैं भी विगत एक साल से मंदिरों के दर्शन में अवकाश के क्षणों में निरत हूँ और नित्य नये-पुराने मंदिरों की भव्यता, उसकी स्थापत्य कला, दिव्यता, शैली से सम्मोहित हूँ। यहाँ मैं मंदिरों के संदर्भ में कुछ तथ्यों को रेखांकित कर आत्मविभोर हो रहा हूँ।

यह निर्विवादित सत्य है कि हिंदू मंदिर “महा-पुरुष” की छवि मानी जाती है। यह अलौकिक पुरुष का एक रूप है जिसपर संपूर्ण ब्रह्मांड के सृजन को प्रतिबिम्बित किया जाता है। भारतीय मंदिरों को प्रमुखतः तीन गुणों-सत्व, रजस् एवं तमस- के आधार पर नागर, द्रविड़ और वेसर के रूप



में वर्गीकृत किया जा सकता है। हिमालय पर्वत से विंध्यपर्वत के क्षेत्र में नागर शैली के मंदिर, विंध्यपर्वत से कृष्णा नदी के मध्य क्षेत्र में वेसर शैली तथा कृष्णा नदी के दक्षिण स्थित भारतभूमि में द्रविड़ शैली में निर्मित मंदिर होते हैं।

ओडिशा के मंदिर प्रमुखतः “नागर शैली” में निर्मित होते हैं, जिनकी एक प्रमुख विशेषता ऊँचे गगनचुम्बी शिखर होते हैं। इनके नीचे गर्भ गृह में आराध्य भगवान की मूर्ति स्थापित होती है। इसके साथ मंडप बने होते हैं जिन्हें “जगमोहन” भी कहा जाता है। ओडिशा के शिल्पकारों की नजरों में प्रमुख मंदिर या पवित्र गर्भगृह को “वर” एवं “जगमोहन” या “मुखशाला” को “वधू” के रूप में माना जाता है। कालान्तर में अनुष्ठानों में बढ़ोतरी के कारण मंदिरों में “नटमंदिर” एवं “योगमंडप” के रूप में दो संरचनाएँ बनायी जाने लगीं। यों तो ओडिशा में मंदिर निर्माण ईसा पूर्व से चले आ रहे थे परंतु भारतीय इतिहास के स्वर्ण युग काल अर्थात् “गुप्त काल” एवं परवर्ती काल में मंदिरों के निर्माण में गति आयी। इसी समय “विरज क्षेत्र” अर्थात् ओडिशा के जाजपुर जिले में शक्ति की अधिष्ठानी देवी-द्विभुजा देवी “विरजा देवी” के मंदिर की स्थापना हुई। कहा जाता है कि जाजपुर में एक करोड़ शिवलिंग स्थापित किए गए। इस समय उत्कल भूमि पर “भौमकार राजवंश” का शासन था।

भुवनेश्वर शहर के सर्वाधिक प्रसिद्ध मंदिर- लिंगराज मंदिर का निर्माण सोमवंशी शासकों के द्वारा 11वीं शताब्दी में हुआ। राजा ययाति केसरी द्वारा निर्मित यह मंदिर कलिंग वास्तुकला का उत्कृष्ट उदाहरण है। खोंडालाइट पत्थरों से निर्मित इस मंदिर में शिव के साथ-साथ वैष्णव मतावलंबियों से जुड़ी मूर्तियाँ भी स्थापित हैं। मंदिर प्रांगण में स्थित स्तंभ पर भगवान शिव एवं विष्णु के वाहक क्रमशः “नन्दी” एवं “गरूड़” की प्रतिमाएँ स्थापित हैं। विल्व पत्र एवं तुलसी-दल दोनों पूजन सामग्री के अंग हैं। इसे शैव-वैष्णव का संगम मंदिर भी कह सकते हैं।



इसी तरह 11-12वीं शताब्दी के दौरान समुद्रतटीय शहर “पुरी” में “भगवान जगन्नाथ मंदिर” का निर्माण गंग वंशीय शासकों द्वारा किया गया। अद्भुत एवं अद्वितीय इस मंदिर में विश्व विख्यात भगवान जगन्नाथ, बलभद्र एवं सुभद्रा की मूर्तियाँ स्थापित हैं। भगवान जगन्नाथ को विष्णु के रूप नरसिम्हा, पुरुषोत्तम, कृष्ण के रूप में भी जाना जाता है। वैष्णव, शैव, शाक्त मतों के केंद्र बिंदु इस स्थल पर विराजमान भगवान जगन्नाथ को कविवर जयदेव के गीत गोविंद में बुद्धावतार के रूप में भी इंगित किया गया है। जगत प्रसिद्ध पुरी रथयात्रा में इन्हें काष्ठ निर्मित रथ पर विराजमान कर अपार समुद्र सदृश्य दर्शनार्थियों को साक्षात् दर्शन कराया जाता है। रथयात्रा के दौरान विश्व भर से लाखों लोग यहाँ आते हैं।

ओडिशा के मंदिरों में विश्व धरोहर स्थल के रूप में ख्यात कोणार्क सूर्य मंदिर को भला कौन भुला सकता है। पुरी शहर से उत्तर-पूर्व में स्थित अर्क-क्षेत्र में चंद्रभागा नदी के सागर संगम कोणार्क में स्थित बलुआ एवं ग्रेनाइट पत्थरों से निर्मित 13वीं शताब्दी के इस मंदिर के अवशेष इसकी भव्यता एवं कला-कौशल की अनन्य गाथा कहते हैं। कलिंग शैली में बने इस मंदिर में सूर्यदेव को रथ पर विराजमान किया गया था जिसे सात घोड़े बारह जोड़ी चक्रों (बारह

महीना) के साथ खींचते हैं। प्रत्येक चक्र आठ अरों (आठ पहर के प्रतीक) से बने थे। तीन मंडपों में बने इस मंदिर के दो मंडप ढह चुके हैं। खंडहर में परिणत इस मंदिर में विद्यमान नक्काशी आज भी ओडिशा की स्थापत्यकला के वैभव एवं स्थानीय शिल्पकारों की उत्कृष्ट कला निष्ठा का परिचायक है। इसी मंदिर के अरुण स्तंभ को हटाकर पुरी स्थित जगन्नाथ मंदिर के सिंहद्वार के समक्ष स्थापित किए जाने की बात कही जाती है। यह भी जनश्रुति है कि मुख्य प्रांगण में सूर्यदेव की प्रतिमा इस प्रकार स्थापित की गयी थी कि समुद्रतट से आने वाली सूर्य की प्रथम किरण नट मंदिर को पार कर सूर्यदेव के मुकुट पर स्थित हीरे पर गिरती थी। वस्तुतः यह मंदिर ओडिशा के वास्तु शिल्प की अभिनव शिखर गाथा का परिचायक है।

मंदिर निर्माण की समृद्ध परम्परा के तहत ओडिशा में कई मंदिर आज भी यहाँ की सांस्कृतिक पहचान को अक्षुण्ण



बनाए हुए हैं। भुवनेश्वर स्थित राजारानी मंदिर, मुक्तेश्वर मंदिर, ब्रह्मेश्वर मंदिर, अनंत वासुदेव मंदिर, चौसठ योगिनी



मंदिर, नियाली (कटक) स्थित सोभनेश्वर मंदिर, खींचिंग (मयूरभंज) स्थित खींचकेश्वरी मंदिर, काकतपुर स्थित मंगला मंदिर, साखीगोपाल स्थित साखीगोपाल मंदिर, कैंटिलो स्थित नीलमाधव मंदिर, भद्रक स्थित भद्रकाली मंदिर, जाजपुर स्थित विरजा मंदिर, केंद्रपाड़ा स्थित बलदेव जी मंदिर आदि मंदिरों की लंबी सूची है जिसे देखने की लालसा हर कला-प्रेमी, धर्मानुरागी की होती है।

यद्यपि ओडिशा में मंदिर निर्माण गंगवंशीय शासकों के दौरान अपने उत्कर्ष पर रहा परंतु कालान्तर में राजकीय संरक्षण के अभाव में मंदिर निर्माण की प्रक्रिया क्रमशः शिथिल होती गयी। फिर भी आज यहाँ विद्यमान मंदिरों की लंबी श्रृंखला गौरवशाली विरासत और अविस्मरणीय अतीत की भव्य गाथा का बयान करती है। समय के चक्र में विनष्ट मंदिर-भग्नावशेष भी आज ओडिशा की एक समृद्ध एवं गौरवशाली अतीत के साथ वर्तमान में जीवित सांस्कृतिक परम्परा चाहे वह नृत्य शैली हो या शिल्प या चित्र या कला की अन्य विधा हो- की अनुपम झाँकी प्रस्तुत करते हैं। आज भी समृद्ध भारतीय विरासत के साक्षी हैं ओडिशा के अन्यान्य मंदिर।

कोणार्क सूर्य मंदिर

श्री संजय कुमार

उप महालेखाकार



ओडिशा के पुरी जिले में पुरी शहर से 30 किलोमीटर की दूरी पर अति प्राचीन कोणार्क सूर्य मंदिर है, जिसे यूनेस्को के विश्व धरोहर के रूप में मान्यता प्राप्त है। वर्तमान मंदिर निर्माण का श्रेय तत्कालीन राजा स्व० राजा लांगूल नृसिंहदेव को है। यह मंदिर सूर्य देवता को समर्पित है।

एक कथा के अनुसार श्री कृष्ण के पुत्र (सांब) को कोढ़ रोग हो गया था। सांब ने कोणार्क में बारह वर्षों तक भगवान सूर्य की तपस्या की। भगवान सूर्य (जो सभी रोगों के नाशक हैं) की कृपा से सांब के सभी रोगों का निवारण हुआ, तत्पश्चात सांब ने ही सूर्य भगवान के मंदिर के निर्माण का संकल्प लिया। सांब को नदी में स्नान करते हुए एक सूर्य देव की मूर्ति प्राप्त हुई, जिसे सांब ने कोणार्क के मंदिर में स्थापित किया। ऐसी मान्यता है कि यह मूर्ति स्वयं देवशिल्पी विश्वकर्मा ने ही बनाई थी।



मंदिर का चित्र

कुछ आलेख ऐसे मिलते हैं कि कोणार्क मंदिर के निर्माणकर्ता, राजा लांगूल नृसिंहदेव की अकाल मृत्यु के कारण मंदिर का निर्माण कार्य रुक गया था। इसके परिणामस्वरूप अधूरा ढांचा ध्वस्त हो गया लेकिन यह तर्कसंगत नहीं है एवं इस मत को आंकड़ों का समर्थन नहीं मिलता है। अन्य



पाषाण कला (कोणार्क मंदिर)

आलेखों के अनुसार और कुछ ताम्रपत्रों से पता चलता है कि राजा लांगूल नृसिंहदेव ने 1282 तक शासन किया। कई इतिहासकार इस मत के भी हैं कि कोणार्क मंदिर का निर्माण 1253 से 1260 ई. के बीच हुआ था। अतएव मंदिर के अपूर्ण निर्माण और इसके ध्वस्त होने का कारण होना तर्कसंगत नहीं है।

“कोणार्क” शब्द, ‘कोण’ और ‘अर्क’ शब्दों के मेल से बना है। अर्क का अर्थ होता है सूर्य, जबकि कोण से अभिप्राय कोने या किनारे से रहा होगा। प्रस्तुत कोणार्क सूर्य-मन्दिर का निर्माण लाल रंग के बलुआ पत्थरों तथा काले रंग के ग्रेनाइट पत्थरों से हुआ है। यह मन्दिर भारत के सबसे प्रसिद्ध स्थलों में से एक है। इसे यूनेस्को द्वारा सन् 1984 में विश्व धरोहर के रूप में शामिल किया गया था। कलिंग निर्माण कला से निर्मित इस मन्दिर में सूर्य देव को रथ पर विराजमान किया गया है तथा पत्थरों की उच्च स्तरीय नक्काशी दर्शनीय है। सम्पूर्ण मन्दिर स्थल को बारह जोड़ी चक्रों के साथ सात घोड़ों से खींचते हुए रथ के आकार में निर्मित किया गया था, जिसमें भगवान सूर्य को विराजमान



मुख्य मन्दिर तीन मंडपों से मिलकर बना हुआ था,
जिसमें से दो मण्डप ढह चुके हैं।

दिखाया गया था। लेकिन वर्तमान में सातों में से एक ही घोड़ा बचा हुआ है। मन्दिर के आधार को सुन्दरता देते हुए ये बारह चक्र साल के बारह महीनों को परिभाषित करते हैं तथा प्रत्येक चक्र के अंदर आठ मोटे खंभों जैसी आकृतियां बनी हैं, जो दिन के आठ पहरो को दर्शाते हैं।

मुख्य मन्दिर तीन मंडपों से बना था जिसमें से दो मण्डप ढह चुके हैं। तीसरे मण्डप में जहाँ मूर्ति थी, अंग्रेजों ने रेत व पत्थर भरवा कर सभी द्वारों को स्थायी रूप से बंद करवा दिया था ताकि वह मन्दिर और क्षतिग्रस्त ना हो पाए। इस मन्दिर में सूर्य भगवान की तीन प्रतिमाएं हुआ करती थीं—

- बाल्यावस्था—उदित सूर्य— 8 फीट
- युवावस्था—मध्याह्न सूर्य— 9.5 फीट
- प्रौढ़ावस्था—अपराह्न सूर्य— 3.5 फीट

गजसिंह द्वार – इसके प्रवेश पर दो सिंह, हाथियों पर आक्रामक होते हुए रक्षा में तत्पर दिखाये गए हैं। दोनों हाथी, एक-एक मानव के ऊपर स्थापित हैं। ये प्रतिमाएं एक ही पत्थर की बनीं हैं जो 28 टन की 8.4 फीट लंबी 4.9 फीट चौड़ी तथा 9.2 फीट ऊंची हैं। मंदिर के दक्षिणी भाग में दो सुसज्जित घोड़े बने हैं, जिन्हें ओडिशा सरकार ने अपने राजचिह्न के रूप में अंगीकार किया है। ये 10 फीट लंबे और 7 फीट चौड़े हैं। मंदिर

सूर्य देव की भव्य यात्रा को दिखाता है। इसके प्रवेश द्वार पर नट मंदिर है। यह वह स्थान है जहां मंदिर की नर्तकियां, सूर्यदेव को अपने भाव अर्पण करने के लिये नृत्य किया करतीं थीं। पूरे मंदिर में जहां-तहां फूल-बेल और ज्यामितीय नमूनों की अद्भुत नक्काशी की गई है। इनके साथ ही मानव, देव, गंधर्व, किन्नर आदि की अकृतियां भी एन्द्रिक मुद्राओं में दर्शाए गए हैं। मंदिर अब आंशिक रूप से खंडहर में परिवर्तित हो चुका है।



महान कवि रवींद्र नाथ टैगोर के शब्दों में :

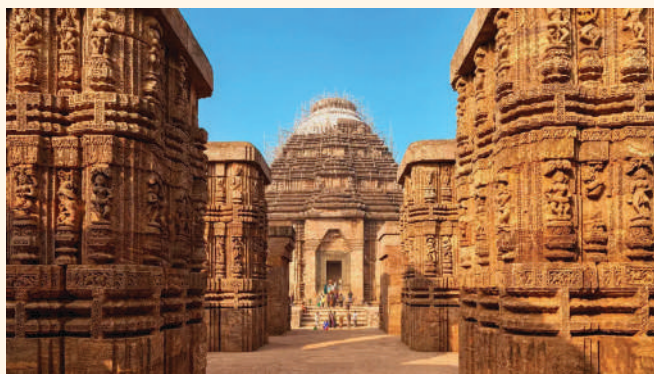
“कोणार्क जहां पत्थरों की भाषा मनुष्य की भाषा से श्रेष्ठतर है।”

तेरहवीं सदी का मुख्य सूर्य मंदिर एक महान रथ रूप में बना है, जिसके बारह जोड़ी सुसज्जित पहियों को सात घोड़ों द्वारा खींचा जाता है। यह मंदिर भारत के उत्कृष्ट स्मारक स्थलों में से एक है। यहां की स्थापत्य कला दोषों से रहित एवं आश्चर्यचकित करने वाली है। यहां की स्थापत्यकला वैभव एवं मानवीय निष्ठा का अनूठा सौहार्दपूर्ण संगम है। मंदिर का प्रत्येक इंच, अद्वितीय सुंदरता और शिल्पाकृतियों से परिपूर्ण है। इसके विषय भी मनमोहक हैं, जो सहस्रों शिल्प आकृतियों, भगवानों, देवताओं, गंधर्वों, किन्नरों, मानवों, वाद्यकों, प्रेमी युगलों, दरबार की छवियों, शिकार एवं युद्ध के चित्रों

से भरी हैं। इनके बीच-बीच में पशु-पक्षियों (लगभग दो हजार हाथी केवल मुख्य मंदिर के आधार की पट्टी पर भ्रमण करते हुए) और पौराणिक जीवों के अलावा महीन और पेचीदा बेल-बूटे तथा ज्यामितीय नमूने अलंकृत हैं। उड़िया शिल्पकला की हीरे जैसी उत्कृष्ट कलाकृति पूरे परिसर में अलग दिखाई देती है।

अति आकर्षक शिल्प आकृतियां

यह मंदिर अपनी अति आकर्षक शिल्पाकृतियों के लिये भी प्रसिद्ध है। इस प्रकार की आकृतियां मुख्यतः द्वारमण्डप



कोणार्क मंदिर रात में

के द्वितीय स्तर पर मिलती हैं। इन आकृतियों का विषय स्पष्ट किंतु अत्यंत कोमलता एवं लय में संजो कर दिखाया गया है। जीवन का यही दृष्टिकोण, कोणार्क के अन्य सभी शिल्प



सूर्य देव की एक शिल्पकृति- कोणार्क में सूर्यदेव

निर्माणों में भी दिखाई देता है। ओडिशा की सर्वोत्तम कृतियों में से एक है। इसकी उत्कृष्ट शिल्प-कला, नक्काशी एवं पशुओं तथा मानव आकृतियों का सटीक प्रदर्शन इसे अन्य मंदिरों से कहीं बेहतर बनाता है।

कालापहाड़

इसका काफी भाग ध्वस्त हो चुका है जिसमें विधर्मी मुस्लिम आक्रांताओं/आक्रमणों की भूमिका अहम रही है।

कोणार्क मंदिर के गिरने से सम्बन्धी एक अति महत्वपूर्ण कारण कालापहाड़ से जुड़ा है। ओडिशा के इतिहास के अनुसार कालापहाड़ ने सन 1508 में यहां आक्रमण किया और कोणार्क मंदिर समेत ओडिशा के कई हिन्दू मंदिर ध्वस्त कर दिए। कोणार्क मंदिर सहित उसने अधिकांश हिन्दू मंदिरों की प्रतिमाएं भी ध्वस्त कीं। हालांकि कोणार्क मंदिर की 20-25 फीट मोटी दीवारों को तोड़ना असम्भव था, उसने किसी प्रकार से मेहराब की शिला को हिलाया, जो कि इस मंदिर के गिरने का कारण बना।

--ॐ शांति--

ओडिशा राज्य के मंदिर और उनकी वास्तुकला



श्री कुमार भास्कर

सहायक लेखा अधिकारी

भारत का ओडिशा राज्य अपने प्राचीन मंदिरों और अद्वितीय वास्तुकला शैली के लिए विश्व प्रसिद्ध है। यह राज्य हिंदू धर्म, कला और संस्कृति की समृद्ध धरोहर को संजोए हुए है। ओडिशा के मंदिर अपनी भव्यता, शिल्पकला और ऐतिहासिक महत्व के कारण आकर्षण के प्रमुख केंद्र हैं।

1. जगन्नाथ पुरी मंदिर का वास्तुशिल्प : भारतीय मंदिर वास्तुकला की उत्कृष्टता का प्रतीक है। यह मंदिर ओडिशा राज्य के पुरी शहर में स्थित है और भगवान जगन्नाथ को समर्पित है। इसे हिन्दू धर्म के चार धामों में से एक माना जाता है। इस मंदिर की स्थापत्य शैली “कलिंग वास्तुकला” कहलाती है, जो अपनी भव्यता, सटीकता और कलात्मकता के लिए प्रसिद्ध है।

मंदिर का ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य

जगन्नाथ मंदिर का निर्माण 12वीं सदी में राजा अनंतवर्मन चोडगंग देव ने करवाया था। यह मंदिर तीन मुख्य देवताओं – भगवान जगन्नाथ, भगवान बलभद्र और देवी सुभद्रा को समर्पित है। मंदिर की वास्तुकला में समय के साथ कई विस्तार और मरम्मत कार्य हुए हैं, जो इसे और भी भव्य और आकर्षक बनाते हैं।

वास्तुकला की विशेषताएँ

जगन्नाथ पुरी मंदिर का स्थापत्य चार मुख्य भागों में विभाजित है:

विमान (गर्भगृह): यह मंदिर का सबसे पवित्र और महत्वपूर्ण हिस्सा है जहाँ भगवान जगन्नाथ, बलभद्र और सुभद्रा की मूर्तियाँ स्थापित हैं। यह भाग अत्यंत उच्च और शिखर से युक्त है। इसकी ऊंचाई लगभग 65 मीटर है। विमान के शिखर पर “नीलचक्र” नामक धातु का चक्र लगा

हुआ है, जो मंदिर की आध्यात्मिक शक्ति का प्रतीक है।

जगमोहन (मंडप): गर्भगृह के सामने स्थित यह हॉल भक्तों के लिए पूजा-अर्चना के दौरान उपयोग होता है। इसकी छत और दीवारें उत्कृष्ट नक्काशी और मूर्तिकला से अलंकृत हैं।

नाट्य मंडप: यह एक विशाल हॉल है जहाँ धार्मिक और सांस्कृतिक कार्यक्रम होते हैं। यहाँ की दीवारों पर देवी-देवताओं, नृत्य करती हुई अप्सराओं और पौराणिक घटनाओं की मूर्तियाँ बनी हैं।

भोगमंडप: यहाँ भगवान को अर्पित किए जाने वाले प्रसाद की तैयारी और वितरण होता है। मंदिर का “महाप्रसाद” विशेष रूप से प्रसिद्ध है।

निर्माण सामग्री और तकनीक

मंदिर का निर्माण मुख्य रूप से ग्रेनाइट और बलुआ पत्थरों से हुआ है। दीवारों और स्तंभों पर बारीक नक्काशी की गई है, जिसमें पौराणिक कथाओं के दृश्य, धार्मिक प्रतीक और जीवन के विभिन्न पहलू दिखाए गए हैं। मंदिर की संरचना इतनी मजबूत है कि यह आज भी प्राचीन गौरव को कायम रखे हुए है।

अलंकरण और मूर्तिकला

मंदिर की दीवारों और स्तंभों पर विभिन्न देवी-देवताओं, योद्धाओं, पशु-पक्षियों और फूल-पत्तियों की नक्काशी की गई है। शिखर पर स्थित “नीलचक्र” पवित्रता और संरक्षण का प्रतीक है। मंदिर के प्रवेश द्वारों पर सिंह, हाथी और अन्य पौराणिक जीवों की मूर्तियाँ अद्भुत शिल्प कौशल को दर्शाती हैं।

मुख्य द्वार और अन्य संरचनाएँ

मंदिर परिसर में चार मुख्य द्वार हैं:

- **सिंहद्वार:** यह मुख्य प्रवेश द्वार है और इसमें दो विशाल शेरों की मूर्तियाँ हैं।
- **अश्वद्वार:** इस द्वार पर घोड़ों की मूर्तियाँ हैं।
- **हस्तिद्वार:** यहाँ हाथियों की मूर्तियाँ हैं।
- **व्याघ्रद्वार:** इस द्वार को बाघ की मूर्तियों से सजाया गया है।

रथ यात्रा का महत्व

मंदिर की प्रसिद्ध “रथ यात्रा” उत्सव इसकी वास्तुकला और सांस्कृतिक महत्व को और भी बढ़ाती है। इस दौरान भगवान जगन्नाथ, बलभद्र और सुभद्रा विशाल रथों पर



विराजमान होकर नगर भ्रमण करते हैं। यह आयोजन लाखों श्रद्धालुओं को आकर्षित करता है और विश्व प्रसिद्ध है।

आध्यात्मिक और सांस्कृतिक महत्व

जगन्नाथ मंदिर केवल एक धार्मिक स्थल नहीं है, बल्कि यह भारत की समृद्ध सांस्कृतिक और वास्तुशिल्प धरोहर का प्रतीक भी है। इसका अद्भुत शिल्पकला, ऐतिहासिक पृष्ठभूमि और आध्यात्मिक वातावरण इसे एक अद्वितीय धरोहर बनाते हैं। यह मंदिर भारतीय कला, संस्कृति और धर्म की जड़ों को समझने के लिए एक अद्वितीय स्थान है।

इस प्रकार, जगन्नाथ पुरी मंदिर का वास्तुशिल्प कलिंग शैली की उच्चतम कृति है। इसका हर भाग न केवल स्थापत्य

कला का बेजोड़ उदाहरण है, बल्कि आध्यात्मिक अनुभव का स्रोत भी है।

2. कोणार्क सूर्य मंदिर की वास्तुकला

कोणार्क सूर्य मंदिर, जिसे “ब्लैक पगोडा” के नाम से भी जाना जाता है, भारत के ओडिशा राज्य में स्थित एक अद्वितीय और भव्य मंदिर है। इस मंदिर का निर्माण 13वीं शताब्दी में गंग वंश के राजा नरसिंह देव प्रथम ने करवाया था। यह मंदिर अपनी अद्भुत वास्तुकला, शिल्पकला और ऐतिहासिक महत्व के कारण विश्व धरोहर स्थलों में शामिल है।

मंदिर की संरचना

कोणार्क सूर्य मंदिर की वास्तुकला नागर शैली की उत्कृष्ट मिसाल है। मंदिर को एक विशाल रथ के रूप में डिजाइन किया गया है, जिसे सूर्य देव का रथ माना जाता है। इस रथ में बारह जोड़ी पहिए और सात घोड़े हैं, जो सूर्य देव की शक्ति और समय की गतिशीलता को दर्शाते हैं। मंदिर पूर्व की ओर मुख किए हुए है ताकि सुबह की पहली किरण सीधे मुख्य गर्भगृह में प्रवेश कर सके।

मुख्य भाग और संरचनात्मक विशेषताएँ

गर्भगृह (विमान):

गर्भगृह मंदिर का मुख्य भाग है, जहाँ सूर्य देव की मूर्ति स्थापित की गई थी। यह भाग अब खंडहर में परिवर्तित हो चुका है। गर्भगृह की ऊँचाई लगभग 70 मीटर थी, लेकिन समय के साथ यह नष्ट हो गया।

जगमोहन (मंडप):

यह सभा मंडप है, जहाँ भक्तजन एकत्र होते थे। इसकी छत गुम्बद के आकार की है और यह स्थापत्य कला का एक अद्भुत नमूना प्रस्तुत करता है।

नाट्य मंडप:

इस भाग में नृत्य और संगीत की प्रस्तुतियाँ होती थीं। नाट्य मंडप की दीवारों पर नर्तकियों की अद्भुत मूर्तियाँ और संगीत के वाद्ययंत्रों की चित्रकारी देखी जा सकती है।

भोग मंडप:

इस स्थान का उपयोग प्रसाद वितरण और अनुष्ठानिक कार्यों के लिए किया जाता था।

शिल्पकला और मूर्तिकला

कोणार्क मंदिर अपनी उत्कृष्ट शिल्पकला के लिए प्रसिद्ध है। मंदिर की बाहरी और भीतरी दीवारों पर असंख्य मूर्तियाँ उकेरी गई हैं, जिनमें देवी-देवताओं, मिथकीय प्राणियों, नर्तकियों, योद्धाओं और राजदरबार के दृश्य शामिल हैं।

सूर्य देव की मूर्तियाँ:

मंदिर में सूर्य देव की तीन प्रमुख मूर्तियाँ हैं, जो सुबह, दोपहर और शाम के समय को दर्शाती हैं। ये मूर्तियाँ उत्कृष्ट कला और यथार्थता का अद्भुत उदाहरण हैं।

कामकला मूर्तियाँ:

मंदिर की बाहरी दीवारों पर कामकला से संबंधित मूर्तियाँ भी हैं, जो उस समय की सांस्कृतिक और सामाजिक परंपराओं को दर्शाती हैं। ये मूर्तियाँ भारतीय शिल्पकला की सृजनात्मकता और कला कौशल का प्रतीक हैं।

घोड़ों और पहियों की मूर्तियाँ:

रथ के सात घोड़े ऊर्जा और गति के प्रतीक हैं, जबकि बारह जोड़ी विशाल पहिए समय के बारह महीनों और दिन-रात के 24 घंटों का प्रतिनिधित्व करते हैं। इन पहियों में जटिल नक्काशी की गई है, जो उनकी सुंदरता को और अधिक बढ़ाती है।

वास्तुकला की विशेषताएँ

नागर शैली की वास्तुकला:

कोणार्क मंदिर नागर शैली की वास्तुकला का एक अनोखा उदाहरण है। इसकी ऊँचाई, जटिल डिजाइन और भव्यता इसे अन्य मंदिरों से अलग बनाती है।

समृद्ध विवरण:

मंदिर की दीवारों, खंभों और छतों पर बारीक नक्काशी की गई है। यहाँ की शिल्पकला इतनी सजीव है कि ऐसा लगता है मानो मूर्तियाँ जीवंत हो उठेंगी।

पाषाण निर्माण:

मंदिर के निर्माण में चट्टान से काटे गए काले ग्रेनाइट और क्लोराइट पत्थरों का उपयोग किया गया है। इस कारण इसे “ब्लैक पगोडा” भी कहा जाता है।

स्थिरता और संरचनात्मक जटिलता:

मंदिर की संरचना को अत्यंत जटिल और वैज्ञानिक तरीके से डिजाइन किया गया है, ताकि यह समुद्र तट पर स्थित होने के बावजूद स्थिर रहे। समुद्र से आने वाली नम हवाओं और समय की मार ने इसे आंशिक रूप से खंडहर में बदल दिया है, लेकिन इसकी भव्यता आज भी जीवित है।

ऐतिहासिक और सांस्कृतिक महत्व

कोणार्क सूर्य मंदिर न केवल एक धार्मिक स्थल है, बल्कि भारत की सांस्कृतिक और ऐतिहासिक धरोहर का प्रतीक भी है। इसे यूनेस्को द्वारा 1984 में विश्व धरोहर स्थल घोषित किया गया। यह मंदिर प्राचीन भारतीय स्थापत्य कला और धार्मिक विश्वासों का प्रतीक है। इसके निर्माण की कहानी, इसकी संरचना और शिल्पकला आज भी इतिहासकारों और पर्यटकों को आकर्षित करती है।

वर्तमान स्थिति

वर्तमान में कोणार्क सूर्य मंदिर एक ऐतिहासिक स्थल और पर्यटन केंद्र है। हालांकि मंदिर का मुख्य भाग समय की मार से नष्ट हो चुका है, लेकिन शेष भाग आज भी स्थापत्य कला की भव्यता को दर्शाता है। भारतीय पुरातत्व सर्वेक्षण (ASI) इसके संरक्षण और रखरखाव में जुटा हुआ है।

3. लिंगराज मंदिर: वास्तुकला की एक अनुपम कृति

लिंगराज मंदिर, जो ओडिशा की राजधानी भुवनेश्वर में स्थित है, भारतीय वास्तुकला का एक उत्कृष्ट उदाहरण है। यह मंदिर भगवान शिव को समर्पित है और भारत के सबसे प्राचीन और भव्य मंदिरों में से एक माना जाता है। इसकी स्थापत्य शैली, शिल्पकला और ऐतिहासिक महत्व इसे अद्वितीय धरोहर बनाते हैं।

ऐतिहासिक पृष्ठभूमि

लिंगराज मंदिर का निर्माण 11वीं शताब्दी में सोमवंशी राजा जजाति केशरी द्वारा किया गया था। यह मंदिर कलिंग वास्तुकला शैली में निर्मित है, जो अपनी भव्यता और शिल्पकला के लिए प्रसिद्ध है। इस मंदिर का उल्लेख कई प्राचीन शिलालेखों और ग्रंथों में मिलता है।

वास्तुकला की विशेषताएं

लिंगराज मंदिर की वास्तुकला चार प्रमुख भागों में विभाजित है:

विमान (मुख्य गर्भगृह): यह मंदिर का सबसे ऊँचा भाग है, जिसमें विशाल शिवलिंग स्थापित है। यह भाग पिरामिड के आकार का है और कलिंग वास्तुकला की जटिल शिल्पकला को दर्शाता है।

जगमोहन (सभा मंडप): यह मुख्य गर्भगृह के सामने स्थित है, जहां श्रद्धालु पूजा-अर्चना करते हैं। इसकी छत और दीवारें जटिल नक्काशी और मूर्तियों से सजाई गई हैं।

नटमंडप (नृत्य मंडप): यहां धार्मिक उत्सवों और नृत्य-नाटकों का आयोजन होता था। इसकी छत पर सुंदर मूर्तियां और शिल्पकारी की गई हैं।

भोगमंडप: यह मंदिर का वह हिस्सा है जहां देवताओं को भोग अर्पित किया जाता है।

मूर्तिकला और शिल्पकला

लिंगराज मंदिर की दीवारों और स्तंभों पर उत्कृष्ट मूर्तिकला और शिल्पकारी की गई है। देवी-देवताओं, अप्सराओं, मिथकीय प्राणियों और धार्मिक प्रतीकों की मूर्तियां अत्यंत जीवंत प्रतीत होती हैं। पत्थर की इन कलाकृतियों में धार्मिक गाथाओं और पौराणिक कथाओं का अद्भुत चित्रण मिलता है।

निर्माण सामग्री

मंदिर के निर्माण में लाल और ग्रे बलुआ पत्थर का उपयोग किया गया है। पत्थरों को इस तरह से जोड़ा गया है कि जोड़ों का पता ही नहीं चलता। यह तकनीकी कौशल और निर्माण कौशल का उत्कृष्ट उदाहरण है।

धार्मिक और सांस्कृतिक महत्व

लिंगराज मंदिर हिंदू धर्म का एक महत्वपूर्ण तीर्थस्थल है। विशेष रूप से महाशिवरात्रि के समय यहां हजारों श्रद्धालु एकत्र होते हैं। इस मंदिर में भगवान शिव को “हरिहर” के रूप में पूजा जाता है, जो भगवान शिव और विष्णु के संयुक्त स्वरूप हैं। यह धार्मिक सहिष्णुता का प्रतीक है।

पर्यावरणीय और सामाजिक प्रभाव

लिंगराज मंदिर न केवल धार्मिक स्थल है बल्कि यह स्थानीय समुदाय के लिए सामाजिक और सांस्कृतिक केंद्र भी है। यह मंदिर भारतीय संस्कृति और परंपरा का जीवंत प्रतीक है। इसके आसपास के क्षेत्र में कई छोटे-बड़े मंदिर हैं, जो भुवनेश्वर को “मंदिरों का शहर” बनाते हैं।

4. राजा रानी मंदिर की वास्तुकला

राजा रानी मंदिर, जो भारत के ओडिशा राज्य के भुवनेश्वर शहर में स्थित है, अपनी अद्वितीय वास्तुकला और सुंदरता के लिए प्रसिद्ध है। यह मंदिर 11वीं शताब्दी में बनाया गया था और ओडिशा की कलिंग शैली की वास्तुकला का उत्कृष्ट उदाहरण है। मंदिर का नाम “राजा-रानी” इसलिए पड़ा क्योंकि इसमें उपयोग किए गए विशेष प्रकार के बलुआ पत्थर को स्थानीय लोग “राजा-रानी” पत्थर कहते हैं। यह मंदिर भगवान शिव को समर्पित नहीं है, जो कि इस क्षेत्र के अधिकांश मंदिरों की विशेषता है, बल्कि इसे एक प्रेम मंदिर के रूप में देखा जाता है।



स्थापत्य विशेषताएँ

राजा-रानी मंदिर की वास्तुकला में दो प्रमुख संरचनाएँ हैं: विमान (मुख्य गर्भगृह) और जगमोहन (सभा मंडप)।

विमान (गर्भगृह):

विमान मंदिर का सबसे पवित्र भाग है, जहाँ देवता की प्रतिमा स्थापित होती है। राजा-रानी मंदिर का विमान ऊँचा और भव्य है, जिसकी ऊँचाई लगभग 18 मीटर है। इसका शिखर पद्मकपाली आकृति का है और इसकी सजावट में अत्यधिक जटिल नक्काशी की गई है। शिखर के ऊपर आमलक और कलश स्थापित हैं। विमान की बाहरी दीवारों पर देवी-देवताओं, अप्सराओं और मिथुन मूर्तियों की अत्यंत सुंदर मूर्तिकला की गई है।

जगमोहन (सभा मंडप):

मंदिर का सभा मंडप, जिसे जगमोहन कहा जाता है, एक विशाल हॉल है जहाँ भक्त पूजा और अन्य धार्मिक अनुष्ठान करते थे। इसकी छत पिरामिड जैसी है और इसमें कई स्तर हैं। इसकी दीवारों पर देवताओं, गंधर्वों और संगीत बजाते हुए आकृतियों की नक्काशी की गई है।

वास्तुकला की विशेषताएँ

राजा रानी मंदिर की वास्तुकला ओडिशा की कलिंग शैली की बेजोड़ कला को दर्शाती है। इसकी मुख्य विशेषताएँ निम्नलिखित हैं:

मूर्ति शिल्प:

मंदिर की दीवारों पर देवी-देवताओं, नायिकाओं, अप्सराओं, गंधर्वों और मिथुन युगलों की मूर्तियाँ बनाई गई हैं। ये मूर्तियाँ शास्त्रीय नृत्य मुद्राओं, अलंकरणों और जीवन के विविध पहलुओं को दर्शाती हैं।

द्वार और स्तंभ सजावट:

मंदिर के प्रवेश द्वारों और स्तंभों पर की गई जटिल नक्काशी उसकी स्थापत्य कला का मुख्य आकर्षण है। द्वारपालों की मूर्तियाँ और उनकी साज-सज्जा विशेष रूप से ध्यान आकर्षित करती हैं।

शिखर और आमलक:

मंदिर का शिखर पद्मकपाली आकार का है, जो ऊपर की ओर संकीर्ण होता गया है। इसके शीर्ष पर आमलक और कलश स्थापित हैं, जो इस युग की वास्तुकला की विशिष्टता है।

वृत्ताकार संरचना:

मंदिर की संरचना का स्वरूप कुछ हद तक वृत्ताकार है, जो इसे अन्य मंदिरों से अलग बनाता है। इसमें चारों ओर खुला स्थान है, जिससे इसकी सुंदरता और बढ़ जाती है।

धार्मिक और सांस्कृतिक महत्व

राजा रानी मंदिर किसी भी देवता की प्रतिमा से मुक्त है, जिससे यह हिंदू मंदिरों में अनोखा स्थान रखता है। इसकी मूर्तियों में प्रेम, सौंदर्य और भक्ति की भावनाओं को दर्शाया गया है। स्थानीय लोग इसे प्रेम मंदिर मानते हैं, क्योंकि इसकी दीवारों पर विभिन्न प्रेमालाप की मूर्तियाँ बनी हैं।

कलात्मक उत्कृष्टता

मंदिर की हर दीवार और स्तंभ पर की गई नक्काशी कला का बेजोड़ नमूना है। इसकी मूर्तियों में सौंदर्य, लालित्य और संवेदनशीलता की अभिव्यक्ति स्पष्ट दिखती है।

ऐतिहासिक और सांस्कृतिक धरोहर

राजा रानी मंदिर आज भारतीय पुरातात्विक सर्वेक्षण के संरक्षण में है और एक महत्वपूर्ण पर्यटन स्थल है। यह भारत की समृद्ध सांस्कृतिक और वास्तु विरासत को दर्शाता है। हर साल हजारों पर्यटक इसकी सुंदरता और इतिहास को निहारने आते हैं।

ब्रह्मयामला तंत्र क्षेत्र बिरजा मंदिर

श्री दीप्ति रंजन राय

कल्याण सहायक



बिरजा मंदिर या बिरिजा क्षेत्र, जाजपुर (भुवनेश्वर से लगभग 125 किलोमीटर/78 मील) उत्तर में, ओडिशा, भारत में स्थित एक ऐतिहासिक हिंदू मंदिर है। इस मंदिर को 13 वीं शताब्दी के दौरान बनाया गया था। यह मंदिर मुख्य रूप से देवी दुर्गा को समर्पित है जिन्हें “विराजा” (गिरिजा) के रूप में पूजा जाता है। जाजपुर का यह मंदिर “विराजा क्षेत्र” और “बिरजा पीठ” उपनामों से भी प्रसिद्ध है। देवी दुर्गा की मूर्ति के दो हाथ (द्विभुज) हैं। माता एक हाथ से महिषासुर की छाती पर भाला मार रही हैं और दूसरे हाथ से उसकी पूंछ खींच रही हैं। उनका एक पैर शेर पर है तो दूसरा महिषासुर की छाती पर है। महिषासुर को एक जल-भैंस के रूप में दर्शाया गया है। मां दुर्गा के मुकुट में गणेश, एक अर्धचंद्र और एक लिंगम की आकृति है। विशाल क्षेत्र में फैले हुए इस मंदिर में भगवान शिव एवं अन्य देवी-देवताओं के कई मंदिर हैं। स्कंद पुराण के अनुसार इस शक्तिपीठ में दर्शन करने से तीर्थयात्रियों को शुद्धि की प्राप्ति होती है और इसे विराज या बिरजा क्षेत्र कहा जाता है।

माना जाता है कि जाजपुर में लगभग एक करोड़ शिवलिंग हैं। ब्रह्मयामला तंत्र में एक भजन है- “आद्या स्तोत्र” जो शक्ति को समर्पित है। भजन में, विमला पुरी की देवी है और विराजा (गिरिजा) उत्कल साम्राज्य में पूजी जाने वाली देवी है, जो ओडिशा बन गया।

श्री बगलामुखी देवताचूड़ामणि के अनुसार, सती की

नाभि उत्कल साम्राज्य में गिरी थी, जिसे “विराज क्षेत्र” भी कहा जाता है। आदि शंकराचार्य ने अपनी अष्टादश शक्तिपीठ स्तुति में देवी का वर्णन गिरिजा के रूप में किया है। तंत्र साहित्य में, ओडियाना पीठ पूर्वी भारत में वैतरणी नदी के पास स्थित है। (ओडियाना एक महिला द्वारा अपनी नाभि के आसपास पहना जाने वाला आभूषण है)। श्री बगलामुखी देवी के लिए एक अलग मंदिर है, जो माँ बिरजा के दाईं ओर है। दश महाविद्या के इस रूप के लिए बहुत कम मंदिर मिलते हैं।

बिरजा मंदिर का प्राथमिक अनुष्ठान शारदीय दुर्गा पूजा है, जो कृष्ण पक्ष अष्टमी की रात से शुरू होती है। कृष्ण पक्ष अष्टमी महालया से पहले शुरू होती है और आश्विन शुक्ल पक्ष नवमी को समाप्त होती है। यह पूजा 16 दिनों तक चलती है जिसे षोडश दिनात्मिका पूजा के नाम से जाना जाता है। रथ उत्सव को “सिंहध्वज” के नाम से जाना जाता है और इसके ध्वज पर सिंह अंकित होता है। शुक्ल अष्टमी से शुक्ल नवमी तक चंद्र संक्रमण के दौरान एक पशु बलि एवं बलि दानम आदि अनुष्ठानों का पालन किया जाता है। नवरात्रि को अपराजिता पूजा के रूप में मनाया जाता है।

अन्य त्योहारों में नक्षत्र, श्रवण, प्रथमाष्टमी, पणा संक्रांति, रज पर्व और नवात्र शामिल हैं। जाजपुर के ब्राह्मणों द्वारा तंत्र और आगम परंपराओं के अनुसार महिषासुरमर्दिनी के रूप में देवी की प्रतिदिन पूजा की जाती है।



भुवनेश्वर का लिंगराज मंदिर और अनन्त वासुदेव मंदिर



श्री उमाकांत महासुआर

वरिष्ठ लेखा अधिकारी

लिंगराज मंदिर, भुवनेश्वर

ओडिशा की राजधानी भुवनेश्वर में लिंगराज मंदिर स्थित है। इस मंदिर को राजा जजाति केशरी, अनंत केशरी और ललाटेन्दु केशरी ने बनाया था। यह मंदिर जगन्नाथ (पुरी) मंदिर से भी पहले बनाया गया था। लिंगराज मंदिर में भगवान लिंगराज की पूजा होती है। इस मंदिर में केवल हिंदू लोगों को ही प्रवेश मिलता है। भगवान लिंगराज को दिन में 8 बार दाल-चावल का भोग चढ़ाया जाता है और इसके अलावा प्रतिदिन भक्तगण नारियल, मिठाई एवं कोरोखई (मुड़की) का भोग लगाते हैं तथा इसमें मंदिर के पुजारी भक्तों की मदद करते हैं।

लिंगराज भगवान स्वयंभू हैं एवं इनका मस्तिष्क छोटा है, लेकिन शक्ति बहुत ज्यादा है। इस मंदिर में माता पार्वती, गणेश, भुवनेश्वरी, नंदी एवं सरस्वती की भी पूजा की जाती है। इस मंदिर के परिसर में लगभग 108 शिवलिंग मंदिर हैं।

लिंगराज मंदिर में महाभारत और नाट्य मंदिर में घोड़े (अश्व) और हाथी के पत्थर की नक्काशीदार प्रतिमाएं बनवाई गई हैं। इस मन्दिर की प्रत्येक शिला पर की गई बहुत ही सूक्ष्म कारीगरी और अद्भुत मूर्तिकला को देखकर दर्शनार्थियों की आँखें आश्चर्य से फैल जाती हैं। लिंगराज भगवान भूमि से उत्पन्न हुए हैं एवं इनका एक नाम

भुवनेश्वर है। इन्हीं के नाम पर शहर का नाम भुवनेश्वर पड़ा है।

हर साल मंदिर में चैत्र के महीने में अशोकाष्टमी और वैशाख महीने में अक्षय तृतीया के दिन रथयात्रा एवं चंदन यात्रा जैसे त्यौहार बहुत उत्साह के साथ मनाए जाते हैं। इसके अलावा, फाल्गुन महीने में दोलयात्रा और श्रावन महीने में जन्माष्टमी उत्सव भी धूमधाम से मनाया जाता है।

अनन्त वासुदेव मंदिर, भुवनेश्वर:

भुवनेश्वर के अनन्त वासुदेव मंदिर को गंगवंश के राजा श्री अनंग भीमदेव की बेटी चंद्रिका देवी के ने 13वीं शताब्दी में बनवाया था। बिंदुसरोवर के किनारे इस मंदिर का निर्माण गंगवंश के राजा नरसिंह देव के शासन काल में हुआ था। इस मंदिर में भगवान श्री बलराम, श्री कृष्ण और देवी सुभद्रा की पूजा की जाती है। बाद में इसमें लक्ष्मी जी की भी प्रतिष्ठा की गई। मंदिर के शिरो भाग में विष्णु जी के चक्र में ध्वज सुशोभित होती है। इस मंदिर में भगवान के सम्मुख गर्भगृह में गरुड़ जी बैठे हुए हैं।

इस मंदिर के शिलालेख में एकाम्र क्षेत्र, बिंदुसागर और गन्धवति नदी का खनन तथा मंदिर निर्माता का नाम और

इनके पति एवं परिवार आदि का नाम लिखा गया है। इस मंदिर में मुख्य मंदिर को छोड़कर गर्भगृह, नाट्य मंदिर एवं





भोग मंडप है। मुख्य मंदिर के अंदर की वास्तुकला एवं चित्रकारी लिंगराज मंदिर की तरह बहुत ही भव्य है।

भगवान अनन्त वासुदेव जी को दिन में आठ बार महाप्रसाद भोग कराया जाता है जिसमें दाल, चावल, खिचड़ी, सब्जी एवं खटाई इत्यादि अर्पित किया जाता है एवं वह प्रसाद भक्त लोगों को आनंद बाजार में बिक्री के लिए भी उपलब्ध कराया जाता है।

इस मंदिर की निर्माता चंद्रिका देवी बचपन से विष्णुभक्त थीं। उन्होंने हैहय वंश के परमहि (वीर) से विवाह किया था, जो वीर नरसिंह देव के शत्रु के साथ युद्ध करके वीरगति को प्राप्त हुए थे। उनकी पत्नी चंद्रिका देवी ने एकाम्र कानन में

इस विष्णु जी का मंदिर बनवाया था।

इस मंदिर के मुख्य मंदिर में अष्टदिगपाल एवं अष्टदिगपालिकाओं की मूर्ति देखने को मिलती है। श्री अनन्त वासुदेवजी की मूर्ति अष्टधातु में बनायी गयी है जिसकी लिंगराज मंदिर में पूजा होती है तथा वह दोलयात्रा, अशोकाष्टमी, चैत्र और वैशाख महीना में बिंदुसागर में चन्दनयात्रा में लिंगराज भगवान के साथ यात्रा करते हैं। आश्विन महीने में शुक्लपक्ष अनन्त व्रत चतुर्दशी में इस मंदिर में व्रतधारियों की भीड़ होती है एवं इस दिन अनन्त व्रतधारी दूर- दूर से भगवान के दर्शन एवं पूजा के लिए आते हैं।

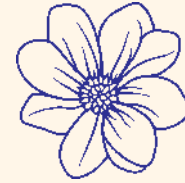
पुरी: जगन्नाथ का निवास



सुश्री शुभश्री पात्रो

सुपुत्री- श्री टी. प्रसाद राव पात्रो, लेखाकार

ओडिशा का गौरव भक्ति का सागर,
जगन्नाथ मंदिर श्रद्धा का आधार।
समुद्र के किनारे जहाँ लहरें खेलती हैं,
पुरी का मंदिर भक्तों को आकर्षित करता है।



समुद्र तट पर सुंदर नगरी
प्रभु जगन्नाथ की प्यारी पुरी।
स्वर्ण मंदिर का भव्य आकार,
करता है मन को आकर्षित अपार।

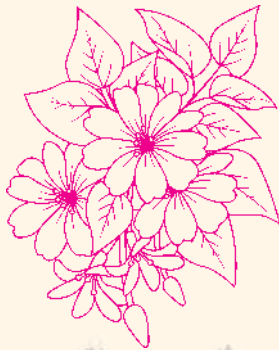
रथ यात्रा का उत्सव,
भक्तों का उत्सव,
लाखों की भीड़।
भगवान की लीला।
आस्था के पीठ।

रूप उसका है सबसे निराला,
अपरम्पार है उसकी हर एक लीला।
कहीं ना होकर भी वह हर जगह है होता,
आकार होकर भी वह निराकार है होता।

भव्य उत्सव देखने को,
आता है मन को आनंद।
मालपुआ की मिठास अब्धुत,
स्वाद बढ़ाती मन को सुखद।

हाथ न होकर भी,
वह सबसे बलवान है होता।
बिन पैर के भी वह,
पूरा संसार है चलाता।

पुरी का सौंदर्य मन को मोह लेता,
प्रभु की कृपा जीवन को रोशन करती।
जगन्नाथ की भक्ति से भरा,
पुरी का दर्शन।



जिसकी आँखों में पूरा जग है बसता,
जिसकी एक झलक से हर पाप है धुलता।
वही तो भक्तों का भगवान है कहलाता,
वही तो जगन्नाथ है कहलाता।
संसार उसे जगत के नाथ
जगन्नाथ है बुलाता।

शैव-वैष्णव प्रतीकात्मक मंदिर: लिंगराज

सुश्री रूपा कुमारी

वरिष्ठ अनुवादक



आस्था एवं पर्यटन की दृष्टि से ओडिशा की राजधानी भुवनेश्वर का सबसे मुख्य आकर्षण है- लिंगराज मंदिर। ओडिशा का लिंगराज मंदिर भारत के प्राचीनतम मंदिरों में से एक है। लिंगराज का अर्थ होता है- “लिंगम के राजा” अर्थात् भगवान शिव। यह मंदिर भगवान त्रिभुवनेश्वर (शिव) को समर्पित है। भुवनेश्वर नगर का नाम उन्हीं के नाम पर रखा गया है जिसका शाब्दिक अर्थ है- “संसार के स्वामी”। भगवान लिंगराज के रूप में भगवान शिव की उपस्थिति यहां होने के कारण भुवनेश्वर को “भगवान शिव का शहर” भी कहा जाता है लेकिन लिंगराज मंदिर में उन्हें “हरिहर” के रूप में पूजा जाता है। इस रूप में “हरि” यानी भगवान विष्णु और “हर” यानी भगवान शिव की पूजा-अर्चना एकसाथ तुलसी एवं बेलपत्र अर्पित कर होती है। इस मंदिर के प्रवेश स्तंभ के शीर्ष पर “नंदी” एवं “गरूड़” की प्रतिमाएं शिव एवं विष्णु के हरिहर स्वरूप की ओर इशारा करते हैं। लिंगराज मंदिर के शीर्ष पर शिव मंदिरों में पाए जाने वाले त्रिशूल या विष्णु मंदिरों में पाए जाने वाले सुदर्शन चक्र के बजाय राम के “पिनाक धनुष” को लगाया गया था इसलिए इसे हरिहर क्षेत्र कहा जाता है। यह

भारत का इकलौता ऐसा मंदिर है जहाँ भगवान शिव एवं भगवान विष्णु दोनों की एकसाथ पूजा होती है। यह मंदिर ओडिशा में शैव और वैष्णव संप्रदायों के समन्वय का प्रतीक है। भुवनेश्वर में चाहे शैव हो या वैष्णव हर धर्म एवं मान्यताएं पुष्पित एवं पल्लवित हुई है। ओडिशा के भगवान श्री जगन्नाथ मंदिर और लिंगराज मंदिर केवल मंदिर नहीं बल्कि ओडिशा की ऐतिहासिक एवं धार्मिक धरोहर भी हैं।

इतिहासकारों के अनुसार लिंगराज मंदिर को 11वीं सदी में सोमवंशी राजा जजाति प्रथम द्वारा बनवाया गया था किंतु इसके कुछ हिस्से 1400 वर्ष से भी अधिक पुराने हैं। कुछ इतिहासकारों के मतानुसार, यह मंदिर 7वीं सदी में ही अस्तित्व में था क्योंकि 7 वीं सदी के संस्कृत लेखों में इस मंदिर का उल्लेख किया गया है। मंदिर के गर्भगृह में स्थापित स्वयंभू (स्वयं प्रकट) शिवलिंग के बारे में माना जाता है कि



इस 8 फीट व्यास और 8 इंच ऊंचे शिवलिंग में भारत के विभिन्न कोनों में स्थित द्वादश ज्योतिर्लिंगों के अंश समाहित हैं। इसलिए भगवान शिव को लिंगराज कहा जाता है:

**“सर्वज्योतिर्मय लिंग सर्वदा गोप्यमः ब्रज
तत्त्वेर्देईष्व साहित्येतिष्ठेहः हमत्रः सर्वदा।”**

अर्थात् शिवपुराण के उत्तर खंड में भगवान शिव ने भगवान ब्रह्मा से स्वयं ही कहा है – हे ब्रह्मा! मेरा यह लिंग ब्रह्म लिंग, सर्वज्योतिर्मय, सर्ववेदमय, सर्वतत्त्वमय एवं सर्वज्ञानमय है। यह एकाम्र क्षेत्र में अदृश्य एवं गोपनीय रूप में विराजमान है। इस लिंग का नाम है— लिंगराज।

यहां हिंदू देवी-देवताओं की पौराणिक गाथा, रहस्य एवं अद्भुत स्थापत्यकला का सुंदर मेल स्वतः दिखाई देता है। पौराणिक मान्यता के अनुसार, लिट्टी और वसा नामक दो राक्षसों ने लिंगराज क्षेत्र में अपने अत्याचारों से जनता को आतंकित और त्रस्त कर रखा था। इन दोनों दुर्दांत राक्षसों के नाश के लिए लोगों ने मां पार्वती का आह्वान किया। भक्तों की पुकार सुनकर मां पार्वती ने लिट्टी और वसा का वध यहीं पर किया था। संग्राम के बाद उन्हें प्यास लगी तो शिव जी ने कूप बनाकर सभी पवित्र नदियों को योगदान के लिए बुलाया। इस मंदिर के पश्चिमी तट पर एक सुंदर उद्यान है, जिसे एकाम्र वन के नाम से जाना जाता है, जिसका अर्थ है – एक आम के पेड़ का जंगल। हिंदू पौराणिक कथाओं के अनुसार, प्राचीन काल में भुवनेश्वर को एकाम्र वन के नाम से जाना जाता था। इस उद्यान में विभिन्न प्रकार के पौधे हैं, जो विभिन्न हिंदू देवी-देवताओं से जुड़े हैं और अपने औषधीय गुणों के लिए जाने जाते हैं।

बात करें मंदिर की बनावट की तो लिंगराज मंदिर का निर्माण कलिंग एवं उड़िया शैली में किया गया है। मोटे तौर पर यह शैली नागर शैली के अंतर्गत आती है। कलिंग वास्तुकला में, मूल रूप से एक मंदिर दो भागों में बना होता है – पहला शिखर (Tower) और दूसरा गर्भगृह (Hall)। शिखर को

“देउल” तथा गर्भगृह को “जगमोहन” कहा जाता है। देउल और जगमोहन की दीवारों पर भव्य रूप में वास्तुशिल्प रूपांकनों और आकृतियों को बनाया जाता है। इसे बनाने के लिए लाल बलुआ पत्थरों का प्रयोग किया गया है। मंदिर की दीवारों पर पौराणिक दृश्यों एवं देवी-देवताओं की आकृतियों को बहुत ही बारीकी से उकेरा गया है। पत्थरों पर ऐसी नक्काशी देखकर हर कोई आश्चर्यचकित रह जाता है कि मानव ने इस अनुपम मंदिर का निर्माण किस आधार पर किया होगा जो इतने शताब्दियों बाद भी अस्तित्व में है। इस मन्दिर के प्रत्येक पाषाण पर कोई न कोई अलंकरण उत्कीर्ण है। जगह-जगह मानवाकृतियों तथा पशु-पक्षियों से सम्बद्ध सुन्दर मूर्तिकारी भी प्रदर्शित है। मंदिर की ऊँचाई लगभग 55 मीटर है। लिंगराज मंदिर को चार वर्गों में विभाजित किया गया है – 1) विमान (गर्भगृह युक्त संरचना), 2) जगमोहन (सभा हॉल), 3) भोग मंडप (प्रसाद हेतु हॉल) एवं 4) नट मंदिर (उत्सव हॉल)। मंदिर का मुख्य प्रवेश द्वार पूर्व दिशा में है जबकि दक्षिणी और उत्तरी दिशा में छोटे प्रवेश द्वार हैं। मंदिर के प्रवेश द्वार का निर्माण चंदन की लकड़ी से किया गया है। मंदिर के प्रवेश द्वार पर भी आपको दो की जगह चार शेर मिलेंगे। शिवजी के शेर पर त्रिभस्म और श्री विष्णु के शेर पर रामनंदी तिलक भी भगवान के हरिहर स्वरूप को दर्शाता है। इस मंदिर के ऊपरी भाग पर उल्टी घंटी और कलश को स्थापित किया गया है जो दर्शनार्थियों के लिए काफ़ी आश्चर्यजनक है।

विशाल परिसर में फैले इस मंदिर में 150 सहायक मंदिर हैं। श्री गणेश जी, श्री कार्तिकेय जी तथा माता पार्वती के तीन छोटे मन्दिर भी मुख्य मन्दिर के विमान से संलग्न हैं। माता पार्वती मन्दिर में मां पार्वती की काले पत्थर की बनी प्रतिमा है। मन्दिर के चतुर्दिक गज सिंहों की उकेरी हुई मूर्तियाँ दिखाई पड़ती हैं। अन्य हिंदू मंदिरों की तुलना में लिंगराज मंदिर में कुछ कठोर परंपराओं का पालन किया जाता है।

यही वजह है कि इस मंदिर के अंदर गैर-हिंदू लोगों को प्रवेश करने की अनुमति नहीं है। हालांकि इस मंदिर के बगल में चबूतरा बनवाया गया है ताकि दूसरे धर्म के लोग भी इसे आसानी से देख सकें। यह विश्व प्रसिद्ध मंदिर उत्तरी भारत के मन्दिरों में रचना सौंदर्य, शोभा और अलंकरण की दृष्टि से सर्वश्रेष्ठ माना जाता है। मन्दिर में प्रत्येक शिला पर कारीगरी और मूर्तिकला से स्थापत्यकला एवं मूर्तिकारों की मेहनत स्पष्ट झलकती है। गर्भगृह के अलावा जगमोहन तथा भोगमण्डप में सुन्दर सिंहमूर्तियों के साथ देवी-देवताओं की कलात्मक प्रतिमाएँ हैं। यहाँ की पूजा पद्धति के अनुसार सर्वप्रथम बिन्दु सरोवर में स्नान किया जाता है, फिर श्री अनंत वासुदेव के दर्शन किए जाते हैं, जिनका निर्माणकाल नवीं से दसवीं सदी का रहा है। गणेश पूजा के बाद गोपालनी देवी, फिर शिवजी के वाहन नंदी की पूजा के बाद लिंगराज के दर्शन के लिए मुख्य स्थान में प्रवेश किया जाता है। उसके बाद माता पर्वती के दर्शन तथा भोग पाने के बाद ही पूजा संपन्न होती है। लिंगराज मंदिर में भगवान को आठ बार भोग लगाया जाता है। शिवलिंग पर 4 बार भोग लगाया जाता है। यहाँ केवल सूखा या सुखिला प्रसाद जैसे खिल्ली, लड्डू, मालपुआ, खाजा ही चढ़ाया जाता है। भगवान विष्णु को 4 बार अर्ना भोग लगाया जाता है जिसमें दाल, खिचड़ी, सब्जी, मीठा दाल, साग, बेसूर और अन्य छप्पन भोग मिट्टी के बर्तन में चढ़ाए जाते हैं।

हजारों सालों से भुवनेश्वर पूर्वोत्तर भारत में शैव एवं वैष्णव सम्प्रदाय का मुख्य केन्द्र है। लिंगराज मंदिर का संबध “शैव सम्प्रदाय” के कापालिकों से भी रहा है, जो अनेक रहस्यमय अनुष्ठानों के लिए जाने जाते हैं। लिंगराज मंदिर की दायीं ओर एक छोटा-सा कुंड है। इसे मरीची कुंड कहते हैं। स्थानीय लोगों के अनुसार, इस कुंड के जल से स्नान करने से महिलाओं की संतान से जुड़ी परेशानियां दूर हो जाती हैं। बिंदु सरोवर लिंगराज मंदिर के उत्तर में स्थित है। यह झील

700 फीट चौड़ी और 1300 फीट लंबी है। यह हर साल चंदन यात्रा उत्सव का केंद्र बिंदु बन जाती है। यहाँ से पूरब की ओर ब्रह्मेश्वर, भास्करेश्वर समुदाय के मन्दिर हैं। इसके पास ही अन्य मन्दिरों में मुक्तेश्वर, केदारेश्वर, सिद्धेश्वर तथा परशुरामेश्वर मन्दिर सबसे प्राचीन माने जाते हैं। ये मन्दिर कलिंग और द्रविड़ स्थापत्यकला के बेजोड़ नमूने हैं, जिन पर जगह-जगह पर बौद्धकला का प्रभाव भी साफ दिखाई देता है। लिंगराज मन्दिर में सनातन विधि से चौबीस घंटे पूरे विधि-विधान के साथ महादेव शिवशंकर की पूजा-अर्चना की जाती है। यहां का महाप्रसाद भी भक्तों के बीच काफी प्रचलित है जिसे मिट्टी के बर्तनों में मंदिर के पुजारियों द्वारा बनाया जाता है। उसे भगवान को भोग लगाने के बाद भक्तों में बांटा जाता है।

हर साल मंदिर में महाशिवरात्रि, अशोकाष्टमी और चंदन यात्रा जैसे त्योहार बहुत उत्साह के साथ मनाए जाते हैं। इनमें से महाशिवरात्रि सबसे महत्वपूर्ण है। महाशिवरात्रि के दौरान श्रावण मास में हजारों भक्त महानदी से जल भरकर पैदल आते हैं और जल चढ़ाते हैं। चंदन यात्रा 21 दिनों का त्योहार है जो अक्षय तृतीया के शुभ दिन से शुरू होता है। इस त्योहार के दौरान देवताओं की मूर्तियों को बिंदु सरोवर ले जाया जाता है और चापा नामक सुंदर सजी हुई संकरी नावों में पानी में जुलूस निकाला जाता है। फिर मूर्तियों को चंदन (चंदन का लेप) और पानी से पवित्र किया जाता है। भगवान लिंगराज के वार्षिक कार महोत्सव या रथ यात्रा को “अशोकाष्टमी” कहा जाता है। यह हिंदू कैलेंडर के अनुसार चैत्र महीने (मार्च/अप्रैल) के आठवें दिन बहुत उत्साह के साथ मनाया जाता है। त्योहार के दौरान, भगवान लिंगराज की मूर्ति को एक सुसज्जित रथ में रामेश्वर मंदिर (जिसे मौसी माँ मंदिर भी कहा जाता है) ले जाया जाता है। देवता की मूर्ति को चार दिनों के बाद बिंदु सरोवर में एक अनुष्ठान स्नान के बाद लिंगराज मंदिर में वापस लाया जाता है। इस त्योहार में

भाग लेने और अपने श्रद्धासुमन अर्पित करने के लिए बड़ी संख्या में भक्त एकत्रित होते हैं।

चूँकि भुवनेश्वर शहर का तापमान काफी गर्म एवं उमस भरा है इसलिए सर्दियों का मौसम लिंगराज मंदिर के दर्शन करने का सबसे अच्छा समय है। सर्दी के समय यहां का मौसम बहुत सुहावना होता है और भुवनेश्वर शहर की प्राकृतिक सुंदरता अपने चरम पर होती है। इस मंदिर के दर्शन हेतु वायुमार्ग एवं सड़क मार्ग से भुवनेश्वर पहुँचा जा सकता है। मंदिर तक पहुँचना काफी आसान है क्योंकि शहर में ऑटो रिक्शा, स्थानीय बसें और निजी टैक्सियाँ आसानी से उपलब्ध हैं। लिंगराज मंदिर और बीजू पटनायक अंतर्राष्ट्रीय हवाई अड्डे के बीच की दूरी लगभग 4.4 किमी है और वहीं भुवनेश्वर रेलवे स्टेशन से मंदिर की दूरी लगभग 4.8 किमी है। ऑटो रिक्शा या टैक्सी अथवा बस से मंदिर तक पहुँचने में लगभग 10-15 मिनट लगते हैं। मंदिर में प्रवेश के लिए कोई शुल्क नहीं है। यह सभी दिन सुबह 6:00 बजे से शाम 7:00 बजे तक खुला रहता है। लिंगराज मंदिर की यात्रा के बाद घूमने लायक कुछ अन्य धार्मिक एवं दर्शनीय स्थल हैं – प्रसिद्ध मुक्तेश्वर मंदिर, राजारानी मंदिर, अनंत वासुदेव मंदिर, ब्रह्मेश्वर मंदिर और परशुरामेश्वर मंदिर, ओडिशा राज्य संग्रहालय, ओडिशा शिल्प संग्रहालय, उदयगिरि और खंडगिरि गुफाएं तथा धौलीगिरि शांति स्तूप। यहाँ के प्रत्येक मंदिर हिंदू धर्म के लिए पवित्र हैं और अपनी मनमोहक वास्तुकला के लिए लोकप्रिय है। मंदिरों के अलावा यह शहर अपने शिष्टाचार, स्वच्छता, संग्रहालय, प्राकृतिक सौंदर्य, आदिवासी परंपरा, कला, नृत्य एवं स्वादिष्ट व्यंजनों के लिए भी बहुत लोकप्रिय है। शैव-वैष्णव धर्मों का प्रतीक लिंगराज मंदिर अपनी अनुपम स्थापत्यकला और अध्यात्म से भक्तों का मन मोह लेता है और हम उन्हें आस्था की एक अलग ही दुनिया में विचरण

करते हुए पाते हैं।

ओडिशा में वैसे तो पौराणिक एवं रहस्यमयी कथाओं को समेटे हुए अनगिनत मंदिर हैं लेकिन यहां के लोकप्रिय मंदिरों में श्री जगन्नाथ मंदिर, कोणार्क मंदिर, लिंगराज मंदिर, माँ तारा तारिणी मंदिर, विमला मंदिर आदि मुख्य रूप से दर्शनीय हैं। यहां की सभ्यता, संस्कृति, कला, नृत्य, प्राकृतिक सुंदरता तथा मानव, प्रकृति एवं ईश्वर के बीच तारतम्य अपने-आप में अनुपम है। यहां के लोग भागदौड़ वाले जीवन और एक-दूसरे से आगे निकलने की प्रतिस्पर्धा की भावना नहीं बल्कि भाईचारे के साथ शांतिपूर्ण जीवन जीना पसंद करते हैं। यही कारण है कि यहां के लोगों में संतोष एवं उनके पास जो कुछ भी है उसे सहेजने की प्रवृत्ति साफ दिखाई देती है। यह ईश्वर के प्रति उनकी श्रद्धा ही तो है जो ओडिशा को मंदिरों में भक्तों की भीड़ से गूंजती हुई भुवनेश्वर को “आस्था की भूमि” एवं “मंदिरों के शहर” जैसे अलंकरणों से सुशोभित करती है। ऐसे में यह कहना निरर्थक प्रतीत नहीं होता कि यहां के मंदिर, उनकी नक्काशीदार पत्थरीली दीवारें, देवी-देवताओं की प्राचीन मूर्तियां और आस्था का संगीत मानव-मन के सांसारिक कोलाहल को दूर कर उसे शांति, सुकून एवं आश्चर्य से भर देता है। लिंगराज मंदिर में भी भगवान “हरिहर” के दर्शन के बाद एक अलग ही सुकून का अहसास होता है। इस मंदिर के प्रांगण में बैठकर मंदिरों की दीवारों, मूर्तियों, धूप-बत्तियों की सुगंध एवं कलाकृतियों को महसूस करने पर भक्त स्वतः एक ईश्वरीय शांति का अनुभव करते हैं जो यहां के पवित्र वातावरण को और अधिक आध्यात्मिक बना देता है।

**संदर्भ स्रोत- स्व. पंडित मनागोविंदा
महासुपाकार द्वारा रचित
“भुवनेश्वर का इतिहास”**

कोणार्क का जन्म

मूल ओड़िया कहानी- श्री अनंत पट्टनायक
हिन्दी में अनुवाद- श्री महेंद्र कुमार शतपथी
पर्यवेक्षक (लेखा)



प्राची नदी के तट पर एक छोटा-सा गाँव ।

सूर्यदेव अस्त हो रहे थे। एक अधेड़ उम्र का मूर्तिकार अपनी कुटियाँ के आँगन में एक अर्द्ध निर्मित अश्व-मूर्ति को खड़े होकर एक-टक देख रहे थे। हाथ में उनके थी - छेनी और मूंगरा। थोड़ी देर बाद वह अपनी प्यारी छेनी को सिर में लगा कर मूर्ति को गढ़ने लग गए। बादल से गिरते हुए बूँद-बूँद बारिश की तरह छेनी की मार से मूर्ति से झड़ने लगे पत्थर के कण।

शाम होने लगी। मूर्तिकार की पत्नी वहाँ दीया जला कर चली गई। चारों तरफ सन्नाटा था और इस सन्नाटे को रूक-रूक कर भंग कर रही थी- केवल मूर्तिकार की छेनी की आवाज ।

दूर से घोड़े की टापू के टप-टप की आवाज सुनाई दी। मगर मूर्तिकार का ध्यान वहाँ नहीं गया । वह तो अपनी पत्थर की कृति को स्वरूप देने में ही मग्न था। घोड़े के टापूओं की आवाज अब धीरे-धीरे निकटतर होने लगी। दरवाजे पर दस्तक देते हुए घुड़सवार ने पूछा- “कोई है?”

रसोईघर से आकर मूर्तिकार की पत्नी ने दरवाजा खोला ।

“आज रात ठहरने के लिए जगह मिलेगी ? लंबी यात्रा करके बहुत थक चुका हूँ। मेरा घोड़ा भी इतना थका हुआ है कि वह और आगे नहीं जा सकता।”

श्रीमतीजी मूर्तिकार को अतिथि के आने की सूचना देने जा रही थी परंतु आगंतुक ने उन्हें उंगली के इशारे से मना करते हुए धीरे से कहा- “शिल्पी अपने शिल्प-निर्माण में मग्न हैं, उनका ध्यान मत तोड़िए।”

अतिथि के पैरों को धोने के लिए एक पात्र में जल और बैठने के लिए एक आसन देकर गृहिणी रसोई घर के अंदर चली गई । अतिथि के लिए रात का खाना भी तो तैयार

करना है। वह मन ही मन सोच रही थी- “कौन हैं यह आगंतुक ! चेहरे से तो लगता है, होंगे किसी राज घराने से, पक्का।”

इधर इन सब से बेखबर और अपनी अश्वमूर्ति बनाने में व्यस्त मूर्तिकार कभी छेनी को नीचे रखकर ध्यान से उस अर्ध-निर्मित मूर्ति को देखते, तो कभी अपने आप से कहते “काश, मैं और एक बार उस घोड़े को देख पाता...!” वह अतीत की किसी स्मृति को ताजा कर रहे थे और उसी आवेग में अपना काम करते जा रहे थे ।

मूर्तिकार की पत्नी ने जब खाना परोसने के बाद अतिथि को खाने के लिए अनुरोध किया, तब अतिथि ने मूर्तिकार की तरफ देखा। श्रीमती जी समझ गई और बोली “सूर्यास्त से पहले वह अपना रात का भोजन ग्रहण कर चुके हैं।” तभी अचानक मूर्तिकार की आवाज सुनाई दी - “छिः...छिः...! इतना बड़ा राज्य है हमारा उत्कल। और हमारा राजा... कितना मूर्ख ! कैसा निर्बोध!” गृहिणी शंका और संकोच से बोली-“क्यों ? क्या हुआ ?”

-“पता नहीं , कहीं दक्षिण में जाकर गोदावरी नदी के किनारे युद्ध कर रहे हैं ! बस थोड़े ही दिन पहले तो गौड़ देश में युद्ध पर थे ! छिः...छिः...।” मूर्तिकार के स्वर में नाराजगी एवं कड़वाहट साफ झलक रही थी। वह ये बातें बोले जा रहे थे मगर मूर्ति के ऊपर से न तो उनकी छेनी ही उठ रही थी और न ही उनकी नजर । -“युद्ध में नरसंहार करके किसी को अमरत्व मिला है क्या ? ऐसा करके कहीं अमर-कीर्ति बनी है ?”

तभी आगंतुक बोल पड़े “युद्ध तो राजा का धर्म है। एक के बाद एक देश पर विजय प्राप्त करने से ही तो राजा

सम्राट बनता है। इतिहास के पन्नों में वीरों की श्रेणी में उसका नाम गिना जाता है।”

अपरिचित स्वर सुनते ही मूर्तिकार चौंक गए। उन्हें तब तक मालूम ही न था कि कोई अज्ञात और अपरिचित व्यक्ति न जाने कब से उनके घर में पधारे हैं। छेनी रखकर वह आगंतुक से अपने अनजानेपन के लिए माफी मांगते हैं।

आगंतुक का खाना समाप्त हुआ। उन्होंने मूर्तिकार से पूछा “मेरे सवाल का जवाब नहीं मिला महारणा जी?”

मूर्तिकार मुस्कराकर बोले “अरे वाह, आप तो विद्वान लगते हैं, फिर मुझे क्या पूछ रहे हैं? हमारे राजा के पूर्वज योद्धा थे, वीर थे। क्या इसी वजह से उन्हें कोई याद करता है? नहीं, वे अमर हैं तो पुरी और भुवनेश्वर की अक्षय कीर्तिओं के लिए।”

आगंतुक ने सिर झुका लिया। मूर्तिकार ने अपना काम जारी रखा था। अल्प बिराम के लिए वे जैसे ही कुटीर से बाहर आए तो सामने आगंतुक के घोड़े को देखकर वह चौंक गए। हाथ में दीया लेकर वह उस घोड़े को बारीकी से बार-बार देखने लगे। मानो खोई हुई कुछ यादें जैसे लौट आई हो।

—“यह क्या! कुछ दिन पहले जिस घोड़े को मैंने देखा था, कहीं ये वही घोड़ा तो नहीं! वही गर्दन, उस पर वही बाल और वही आँखें!” उनका चेहरा प्रसन्नता से चमक उठा। ज्यादा देर न करके मूर्तिकार अपनी अधूरी मूर्ति के पास लौट आए। पत्थर पर उनकी छेनी और मूंगरा के निरंतर आघात से रात के सन्नाटे को चीरते हुए शुरू हो गया एक अद्भुत संगीत...

अतिथि सो गए थे। सुबह जब उनकी नींद टूटी तब उनकी आँखें आँगन की ओर गईं। उन्होंने देखा कि उन का घोड़ा वहाँ बिल्कुल उनके सामने खड़ा है, मानो वह एक नए दिन की यात्रा आरंभ करने के लिए तैयार हो। आनंद अधीर आगंतुक अपने घोड़े की ओर तेजी से बढ़े। घोड़े को गले लगाते ही वह स्तब्ध हो गए। उसके पूरे शरीर पर हाथ फेरते हुए अचानक उनकी नजर घोड़े की पैरों के पास गहरी नींद में सोए मूर्तिकार पर पड़ी। उनके हाथ में अभी भी छेनी है, लेकिन

छाती के ऊपर। आगंतुक का भ्रम दूर हुआ। वह जान गए कि यह उनका घोड़ा नहीं है बल्कि मूर्तिकार के हाथ से बना हुआ पत्थर का घोड़ा है। सच में, मूर्तिकार की कारीगरी अद्भुत थी!

चैत्र माह की एक और संध्या। मूर्तिकार और उनकी पत्नी बात कर रहे थे कि तभी दो कोतवाल आकर बोले—“महारणा जी, महाराज के आदेश से आपको हमारे साथ चलना होगा। महाराज थोड़े ही दूरी पर विराजमान हैं।”

यह सुनकर मूर्तिकार दम्पति के ऊपर मानो बज्रपात हुआ हो! घबड़ाकर दोनों एक दूसरे की तरफ देखने लगे। थोड़ी देर बाद पत्नी डर-डर के बोली “उस रात शायद कोई राजपुरुष गुप्त यात्रा पर निकले हुए यहां आए थे। आप तो राजा को मूर्ख, निर्बोध और पता नहीं क्या-क्या कह गए। कौन जाने, अब क्या होगा...!”

दोनों कोतवाल दो खंभे की तरह खड़े थे। डरते हुए भी मूर्तिकार साहस जुटाकर बोले “उत्कल के महाराज शत्रु के लिए निर्दय हो सकते हैं, परंतु अपनी प्रजा के प्रति सहृदय रहना उनका धर्म है। गुप्तचर के संवाद से अगर राजा दंड देंगे, यही सही? गरीब मूर्तिकार कर भी क्या सकता है! ठीक है, चलिए।”

—“महाराज का यह भी आदेश है कि आपकी पत्नी भी आपके साथ जाएंगी।”

पति के साथ जाएंगी। यह सोचकर श्रीमती का चेहरा खिल उठा।

पुन्नाग, नारियल आदि पेड़ों से घिरा हुआ एक छोटा सा मंदिर, जिसमें बहुत दिनों से सूर्यदेव प्रतिष्ठित थे। उसी मंदिर के प्रांगण में व्यस्त पैरों चले आ रहे थे एक सुगठित शरीर वाले सुपुरुष। वे चिंतित दिख रहे थे।

कौन हैं वह? कहीं वह लाखों ओड़िया लोगों के प्यारे राजा नरसिंह देव तो नहीं! परंतु उनका पहनावा तो किसी राजवंशी की तरह प्रतीत होता है ही नहीं!

मूर्तिकार उनसे बहुत प्रभावित हुए।

मूर्तिकार और उनकी पत्नी को देखते ही राजा नरसिंह देव मुस्कराते हुए उनके स्वागत में उनके पास आ पहुंचे। वे मूर्तिकार से कहने लगे—“महारणा जी, आप सचमुच आए हैं! जो निडर होकर उत्कल के राजा का आलोचना करने का साहस रखता है, उसे सही रास्ता भी दिखा सकता है... मुझे लग नहीं रहा था कि आप इतनी आसानी से आएंगे!”

नरसिंह देव ने गहरी सांस ली। इधर पति-पत्नी दोनों मानो निष्प्राण गए हो।

नरसिंह देव बोल उठे—“महारणा जी, माफ कीजिएगा, वास्तव में मुझे आपके घर जाना चाहिए था। पर भेद खुल जाता।”

महारणा जी भी निशब्द हो गए थे।

महाराज बोलते रहे—“मुझे आपका घोड़ा चाहिए। आपका घोड़ा मुझे दे दीजिए महारणा जी।”

—“घोड़ा ! मैं घोड़ा कहाँ से लाऊँ महाराज ?”

—“वह ? जो आप उस रात को गढ़ रहे थे ?”

—“क्या उसी गुप्तचर ने आपको यह जानकारी दी है ?”

राजा हँस कर बोले—“महारणा जी ,मैं स्वयं ही अपना गुप्तचर हूँ और यह जानकारी भी मैंने अपने आपको दी है । उस दिन मैंने अपनी आँखों से देखा था उस घोड़े को ।”

मूर्तिकार महाराज के पैरों पर गिर गए, तभी महाराज ने उन्हें संभाल लिया ।

—“नहीं महारणा जी, किसी के सामने नतमस्तक न होने के लिए मुझे विधि ने मजबूर किया है। नहीं तो प्रणाम मुझे करना चाहिए आपको। आप मुझसे बड़े हैं महारणा जी। मेरा सिंहासन, मेरी राजशी शान-व-शौकत और मेरे शौर्य से भी आप बहुत बड़े हैं। मेरे जैसे कई राजा आएंगे और जाएंगे। परन्तु आप और आपकी कृतियाँ हमेशा के लिए अमर एवं अविस्मृत रह जाएंगी । मुझे आपके अपूर्व अद्भुत घोड़े और अपने आपको भी दे दीजिए महारणा जी...।”

राजा जैसे कला के किसी दूरदर्शी स्वप्न में खो चुके थे। वह कहने लगे— “मैं इसी जगह एक भव्य सूर्य मंदिर

निर्माण करने के लिए आदेश देता हूँ। शुभ मुहूर्त देख के इसका शुभारंभ कीजिए । मंदिर ऐसा होना चाहिए— जैसे एक रथ हो, जो किसी भी वक्त आकाश की दिशा में उड़ने के लिए तैयार हो। आपकी वह अश्वमूर्ति मेरे प्रासाद में नहीं बल्कि आपके कृति के सामने ही रहेगा। मेरे घोड़े ने कई युद्धों में मेरा साथ दिया है। वह एक दिन मर जाएगा, पर उसकी मूर्ति, उसकी स्मृति बनकर हमेशा के लिए रह जाएगी।”

यह सुनकर मूर्तिकार जैसे खुद मूर्ति बन चुके थे ।

राजा ने कहा “मेरा देश शिल्पियों की कर्मभूमि है । प्रजा की सुरक्षा मेरा प्रथम कर्तव्य है। इसलिए मुझे युद्ध करना ही होगा । शत्रु को डराकर, दूर खदेड़ना होगा ताकि मेरे देश के मूर्तिकार चैन से मूर्तियों का निर्माण कर सकें ।”

महारणा जी कुछ कहने वाले थे पर राजा ने फिर से कहना शुरू कर दिया “परन्तु आपने उस दिन सच कहा था कि एक दिन मेरा अस्तित्व मिट जाएगा, मेरा नाम भी धूमिल हो जाएगा, मिट जाने दो। मेरी जाति की प्रतिभा तो जीवित रहे...”

महाराज नरसिंह देव की आँखों से निरंतर अश्रु बहने लगे।

गदगद आवाज में महारणा जी बोले— “महाराज, जब तक इस शरीर में प्राण है, मैं मेरी पूरी ताकत इस मंदिर को बनाने में लगा दूंगा। एक दिन पुरी बड़दाण्ड (श्री जगन्नाथ मंदिर के सामने का रास्ता)पर आपके घोड़े को एक बार देखा था। आज आप को आँख भरके देख रहा हूँ। जब तक आपकी प्रतिमूर्ति गढ़ न लूँ ..”

राजा नरसिंह देव महारणा जी के मुँह पे हाथ रख कर बोले— “नहीं-नहीं, मेरी नहीं , मेरे ओडिशा की मूरत बनाईए। मेरे देश के पेड़-पौधे, फल-पुष्प, पशु-पक्षी, गुरु-शिष्य, योद्धा-नागरिक सबकी मूर्तियाँ बनाईए दूसरे मूर्तिकारों के साथ मिलकर। आपके और मेरे वंशज युगों तक इसे देखते रहेंगे...”

हम जिस कोणार्क सूर्य मंदिर को देख रहे हैं वह भग्न रूप में आज भी जीवंत है। उसे देखकर दर्शनार्थियों की आँखें आश्चर्य एवं कौतूहल से चमक उठती है। कोणार्क मंदिर के साथ जीवंत हैं – मूर्तिकार के अश्व और राजा नरसिंह देव की मूर्तियाँ ।

माँ तारा तारिणी

श्री मनोरंजन पाणिग्राही

वरिष्ठ लेखा अधिकारी



अपनी समृद्ध परंपरा एवं अपार प्राकृतिक संपदा से युक्त तथा पूर्व में ओडिशा के नाम से जाना जाने वाला ओडिशा भारत का खजाना एवं भारत का सम्मान है। अति सुंदर मंदिरों और असाधारण स्मारकों से परिपूर्ण हजारों विपुल कलाकारों एवं कारीगरों के घर तथा समुद्र तटों, जीव अभ्यारण्य और अक्सर आकर्षक सौन्दर्य का प्राकृतिक परिदृश्य रखने वाला ओडिशा एक अनोखी और अनुपम भूमि है। ओडिशा को “लैंड ऑफ टेम्पल्स” भी कहा जाता है क्योंकि इस राज्य में

700 से अधिक मंदिर हैं। ओडिशा को प्यार से “भारत की आत्मा” कहा जाता है। तीन प्रसिद्ध मंदिर जो “स्वर्ण त्रिभुज” कहलाते हैं – ओडिशा में पर्यटन के प्रमुख बिंदु भुवनेश्वर में लिंगराज मंदिर, पुरी में श्री जगन्नाथ मंदिर और कोणार्क में सूर्य

मंदिर हैं। ये आध्यात्मिक स्थान कलिंग शैली की वास्तुकला की खूबसूरती का प्रतिनिधित्व करते हैं।

सभी के लिए पवित्र स्थान हिंदू, जैन और बौद्ध ओडिशा के भक्तों के लिए एक बहुत ही सम्मानित तीर्थ स्थान है। विश्व प्रसिद्ध तीर्थ केंद्रों के बावजूद ओडिशा में अनेक प्रसिद्ध हिंदू मंदिर हैं; भुवनेश्वर में लिंगराज मंदिर, राम मंदिर, बह्मेश्वर मंदिर, परशुरामेश्वर मंदिर, गुंडिचा मंदिर, कटक में

धवलेश्वर मंदिर आदि ओडिशा के खूबसूरत एवं अनूठे मंदिर हैं। इस लेख में माँ तारा तारिणी मंदिर के बारे में कुछ महत्वपूर्ण तथ्यों एवं जानकारियों को साझा करने का प्रयास है।

पूर्वेश्वरी माँ तारा तारिणी ओडिशा के ब्रह्मपुर शहर से 30 किमी दूर ऋषि कुल्या नदी के किनारे पुष्पगिरी पहाड़ (तारिणी पर्वत/कुमारी पहाड़) के ऊपर स्थित माँ का प्रसिद्ध शक्तिपीठ है। यह जागृत शक्तिपीठ भारत के पूरे शक्तिपीठों

में से एक है और यहाँ सती के स्तन गिरने का दावा किया जाता है। यहाँ माँ तारा और माँ तारिणी को आदि शक्ति के रूप में पूजा जाता है। भारत में 42 शक्तिपीठों में से 4 (चार) को तंत्र पीठ की मान्यता दी गई है। माँ तारा तारिणी इन्हीं 4 तंत्रपीठों में से एक है। देवी भागवत



के अनुसार श्रीहरी विष्णु के अनुरोध पर शनि देवी के शरीर में प्रवेश किए और शरीर को 206 भाग में विभक्त कर दिया और उनमें से 42 भाग मुख्य पीठ के रूप में उभरे।

पौराणिक ग्रंथों के अनुसार, चार प्रमुख शक्तिपीठ जो तंत्र पीठ की मान्यता रखते हैं, वे इस प्रकार हैं—ओडिशा, ब्रह्मपुर में माँ तारा तारिणी पीठ (स्तन), पुरी श्री जगन्नाथ मंदिर के परिसर में बिमला (पाद), गुवाहाटी का कामाख्या

पीठ (योनि पीठ) और कोलकाता का दक्षिण कालिका (मुख खंड/ पैर की अंगुली)। कालिका पुराण भी इस तथ्य को मान्यता देता है और इसमें वर्णित एक श्लोक में कहा गया है:

“बिमला पादखंडनच

स्थनखंडनच तारिणी (तारा तारिणी)

कामाख्या योनिखंडनच

मुखखंडनच कालिका

अंग प्रत्यंग संगेन विष्णुचक्र क्षेतेन्यच”

शिव पुराण देवी भागवत पुराण, कालिका पुराण, अष्टशक्ति है। पीठ निर्णय तंत्र में तारा तारिणी समेत 4 आदि शक्तिपीठों का वर्णन किया गया है। महाराजा दक्ष के द्वारा अपमान किए जाने के बाद जब माता सती ने अपने प्राण त्याग दिए तो भगवान शिव उनके मृत देह को लेकर भयंकर क्रोध में आ गए। उनके क्रोध को शांत करने के लिए भगवान विष्णु ने अपने सुदर्शन चक्र से माता सती के मृत शरीर को कई भागों में विभक्त कर दिया। इस दौरान माता सती के दोनों स्तन इसी स्थान पर गिरे, जहाँ स्थापित हुआ माँ तारा तारिणी मंदिर। मंदिर में दो जुड़वा देवियाँ—तारा और तारिणी की पूजा की जाती हैं।

कई मान्यताओं के अनुसार यह भी माना जाता है कि मंदिर की मुख्य देवियाँ—तारा और तारिणी कुछ समय के लिए मानव रूप में अपने भक्तों के बीच रही। उन्होंने अपने भक्तों के बीच रहते हुए कई चमत्कार किए, जिससे लोगों को उनकी शक्ति का आभास हुआ। इसके बाद से कुमारी पहाड़ी पर तारा तारिणी मंदिर अस्तित्व में आया। आज ओडिशा के अंदर लगभग सभी इलाकों में माता तारा और तारिणी को इष्ट देवी के रूप में पूजा जाता है और ओडिशा के निवासियों के घरों में तारा और तारिणी की मूर्तियाँ और तस्वीर मिल जाएगी।

तारा तारिणी आदि शक्तिपीठ में दो अत्यंत प्राचीन पत्थर की प्रतिमाएँ तारा और तारिणी का प्रतिनिधित्व करती

हैं। इन प्रतिमाओं को स्वर्ण और चाँदी के आभूषणों से सुसज्जित किया गया है। इसके अलावा इन दो प्रतिमाओं के बीच में पीतल के दो मुख स्थित हैं, जिन्हें जीवंत प्रतिमा के रूप में जाना जाता है। तारा तारिणी आदि शक्तिपीठ शक्ति तंत्र का प्रमुख केंद्र माना जाता है। तारा तारिणी मंदिर का निर्माण कलिंग वास्तुकला के अनुसार हुआ है। कुमारी पहाड़ी के ऊपर स्थित यह मंदिर पूर्णतः पत्थरों का उपयोग करके बनाया गया है। ऐसा माना जाता है कि इस मंदिर का निर्माण कलिंग राजाओं द्वारा प्राचीन काल में कराया गया। मंदिर जिस पहाड़ी पर स्थित है, उसकी ऊँचाई 708 फुट है, जहाँ यह आदि शक्तिपीठ क्षेत्र लगभग 180 एकड़ जमीन पर फैला हुआ है। कुमारी पहाड़ी की चोटी तक पहुँचने के लिए 999 सीढ़ियों की चढ़ाई है। इसके अलावा एक पक्की रोड भी पहाड़ी की चोटी पर स्थित मंदिर तक जाती है। हालाँकि सभी पर्वतीय तीर्थ स्थानों की तरह भक्त यहाँ भी सीढ़ियाँ चढ़कर ही जाना पसंद करते हैं।

जाति, वर्ण, धर्म से परे कोई भी भक्त देवी के दर्शन सुबह 5 बजे से रात 10 बजे तक कर सकते हैं। यहाँ के मुख्य पर्व में चैत्र पर्व प्रधान है। हिंदी कलेंडर के चैत्र महीने (जो मार्च एवं अप्रैल में आता है) को बड़ा पवित्र माना जाता है। भक्तों का मानना है कि इस महीने के प्रत्येक मंगलवार को देवी के दर्शन करने से मनुष्य की सभी इच्छाएँ तथा आकांक्षाएँ पूरी होती हैं। इसलिए मंगलवार को कम से कम 4 लाख श्रद्धालु यहाँ दर्शन के लिए आते हैं। इस महीने के अंदर लाखों बच्चों का मुंडन भी करवाया जाता है। ये मान्यता है कि नवजात बच्चे का 1 साल पूरा होने के बाद यहाँ पर प्रथम मुंडन करवाने से आयु, आरोग्य तथा बुद्धि मिलती है। इसके अतिरिक्त नवरात्रि, दशहरा, साल के सभी मंगलवार, संक्रांति मुख्य पर्व के रूप में यहाँ पर मनाया जाता है। देवी तारा तारिणी दक्षिणी ओडिशा के अधिकांश घरों में अधिष्ठात्री देवी हैं।

माँ भट्टारिका मंदिर

सुश्री अनिता दास

कनिष्ठ हिंदी अनुवादक



घर के सभी लोग शाम से ही माँ भट्टारिका मंदिर जाने की तैयारी में लगे हुए थे। माँ छोटी बहन से कह रही थी कि ढंग के कपड़े ही पैक करना। मंदिरों में थोड़ी शालीनता के साथ ही जाना होता है। मंदिर के नाम से ही तो मेरे रोंगटें खड़े हो जाते हैं। खैर ये सब बाद की बात है, तू जा और मझली दीदी को भी बता दे। वैसे तो उसे कुछ बताने की कोई जरूरत नहीं है, क्योंकि उसी ने तो हमारी माँ भट्टारिका मंदिर जाने की

खाहिश को साकार किया है। मझली कह रही थी कि उसने ट्रेन की टिकटें बुक कर ली हैं और सुबह-सुबह ही निकलना होगा घर से। इसी बात पर बाबा पता नहीं कब से घड़ी को टकटकी लगाए हुए वहीं तकिया-बिस्तर डाले पड़े हैं और रह-रहकर अपने अतीत



की स्मृतियों को झांकते हुए माँ भट्टारिका देवी की भव्यता और विशालता का गुणगान कर रहे हैं। माँ भट्टारिका कटक, ओडिशा के सबसे प्रसिद्ध मंदिरों में से एक है, समझी श्रीनिता की माँ, जो ओडिशा के बदाम्बा जिले के सासंगा के एक छोटे से गाँव में बसा, भट्टारिका मंदिर राज्य की सबसे लंबी नदी महानदी के तट और रत्नागिरी पहाड़ी के तल पर स्थित है। यहाँ महानदी का पानी सीधे किनारे से टकराता है और बारिश के मौसम में तैरने के लिए काफी जोखिम भरा हो

जाता है। यहाँ हर साल अलग-अलग जल स्तर चिह्नित किए जाते हैं। महानदी नदी में बाढ़ के दौरान पानी मुख्य मंदिर परिसर में प्रवेश करता है। मंदिर के स्थानीय भिक्षु मूर्ति को मंदिर के पीछे पहाड़ी पर बेहतर स्थान पर ले जाते हैं और दैनिक अनुष्ठान करते रहते हैं।” ये कहते हुए बाबा का ध्यान घड़ी पर जाता है और वो ज़ोर-ज़ोर से बोलने लगते हैं कि इतनी देरी हो गई है और तुम लोगों का सामान अभी तक पैक

नहीं हुआ है, अभी डिनर भी तो बाकी है। चलो अपने हाथों में थोड़ी फुर्ती लाओ और फटाफट डिनर करके सो जाते हैं, उड़ी बाबा, अभी तक मझली भी बाहर से नहीं आई है। अरे कोई फोन करके पूछो, कहाँ रह गई। जैसे ही छोटी ने फोन हाथ में लिया, उतने में ही मैं

आ गई। मुझे देखकर बाबा को थोड़ी राहत महसूस हुई।

देर रात सबने खाना खाया और सोने के लिए अपने-अपने कमरे में चले गए, सामान सब पैक हो गया था। बाबा की आवाज़ सुनाई दे रही थी; वे माँ को मंदिर के बारे में बता रहे थे कि भट्टारिका मंदिर देवी भट्टारिका को समर्पित है जिन्हें शक्ति का अवतार माना जाता है, सुन रही हो ना श्रीनिता की माँ। पता है श्रीनिता की माँ इस मंदिर की अपनी एक पौराणिक लोककथा है कि मंदिर उसी स्थान पर स्थित है

जहाँ देवी दुर्गा ने परशुराम को अपनी शक्तियाँ प्रदान की थीं। जब उन्होंने देवी की पूजा की थी, क्योंकि उन्हें सहस्रायु से हार का सामना करना पड़ा था। यह इतिहास और पौराणिक कहानियों से भरी हुई एक अनोखी जगह हैं। यह मंदिर देखने में साधारण है, लेकिन जब एक बार इस मंदिर के दर्शन हो जाते हैं तो मानो मन एक अलौकिक सौहार्द्र और अबोधता के एक अवर्णनीय एहसास से भर जाता है।

सुबह होते ही सब माँ भट्टारिका के दर्शन करने के लिए तैयार हो गए। हम सब रेलवे स्टेशन पहुँचे तो ट्रेन प्लैटफॉर्म पर लग चुकी थी। बड़ी तत्परता से हम ट्रेन में सवार हो गए और अपने सीट पर बैठकर ओडिशा आने का इंतजार करने लगे। बाबा होटल बुक हुआ है कि नहीं-पूछ रहे थे तो मैंने हामी भरते हुए कहा कि सब कुछ व्यवस्थित हो गया है, केवल हमें वहाँ पहुँचना बाकी है। लगभग 10 घंटे बाद हम कटक जंक्शन उतरे और वहाँ से लगभग 82 किमी दूर है भट्टारिका देवी मंदिर। बस से हमने यह दूरी तय की और पहुँच गए माँ भट्टारिका देवी के मंदिर; अपना ग्राम्य आकर्षण बिखेरता हुआ यह मंदिर नदी के किनारे मैदानों के शानदार दृश्य और रत्नागिरी पहाड़ों की खूबसूरत श्रृंखला से घिरा है। आज की भागदौड़ और चकाचौंध वाले जीवन से परे; एकदम शांत वातावरण।

हम मंदिर के दर्शन नहीं कर पाए, जैसे ही हम मंदिर के दरवाजे तक पहुँचे- दरवाजा बंद हो गया था और पंडित जी ने संध्या के समय आने के लिए कहा था तो हमारा उत्साह थोड़ा शिथिल पड़ गया और हमलोग संध्या का इंतजार करने लगे। बाबा मंदिर को देखते हुए कहने लगे कि पता है तुम लोगों को कि मंदिर का जीर्णोद्धार किया गया है। इसी वजह से इसका एक पूजनीय संरचना के रूप में थाह लेना बड़ा ही मुश्किल है। कहा जाता है कि इतिहास के अनुसार पुरी के राजा गजपति के निर्देश पर हाट और मल्ला नाम के दो भाइयों ने यहाँ शंक और मेओरी नाम के दो गाँव बसाए

थे। समय के साथ इन दोनों गाँवों का विलय होकर शंखमेरी बन गया। जब दोनों भाई अपना किला बनाने के लिए जगह तलाश रहे थे तो एक ने शबर के कब्जे वाले स्थान पर एक अलौकिक घटना देखी और जाना कि यह बीरमती है, किला बनाने के लिए सही जगह। लेकिन शबर अपनी जगह खाली करने को तैयार नहीं था। इसलिए दोनों भाइयों में युद्ध हुआ, युद्ध में शबर की मृत्यु के बाद उन्होंने शबरी से भी युद्ध किया। शबरी भी हार गई, अपनी मृत्यु से पहले उसने अपने दोनों भाइयों को खरौद की महाकाली और मवत्तारिका की पूजा करने का निर्देश दिया। उसके बाद दोनों भाइयों ने सेठ में एक भिक्षु मंदिर बनाया। उन्होंने अपने राज्य का नाम भट्टारिका में से एक बृहदम्बा के नाम पर रखा। राजा परशुराम ने अपने बाण से पत्थर को तराश कर देवी महामाया माँ भट्टारिका की आराधना की थी, पौराणिक कथाओं के अनुसार, परशुराम ने धरती को नुकसान से बचाने के लिए माँ भट्टारिका से प्रार्थना की थी। विष्णुकला की प्राप्ति के लिए माँ ने उन्हें कांतिलोर के पद्मशेखर में नीलमाधव की पूजा करने की सलाह दी है और मिलर्जुन के वध के लिए उन्हें दिव्यास्त्र दिया। पौराणिक कथाओं के अनुसार परशुराम के मिलर्जुन से पराजित होने के बाद देवी दुर्गा की पूजा करने के बाद वे परशुराम के मदद के लिए आई और उन्हें बचाया। यहाँ देवी को उबली हुई मछली का भोग लगाया जाता है। इसीलिए इस शक्तिपीठ को परशुरामपीठ कहा जाता है और भक्त दोनों तरह से माँ की पूजा करते हैं। जब माँ ने देखा कि अब बाबा रूकने वाले नहीं हैं तो वो बाबा की बातों को काटते हुए बोली कि यहाँ हम बात करने नहीं बल्कि घूमने आए हैं। मंदिर बंद है तो क्या हुआ; चलिए आस-पास ही घूम लें।

हमलोग नदी के शानदार दृश्य और रत्नागिरी पहाड़ों की सुंदर श्रृंखला को देखकर मंत्रमुग्ध हो गए। यहाँ के रास्ते छोटे मंदिरों और गुफाओं के साथ पहाड़ों के उच्चतम बिंदु

तक एक मिनी ट्रेक की तरह प्रतीत होते हैं। पहाड़ी की चोटी तक पहुँचने के लिए एक कच्ची सीढ़ियाँ हैं। भगवान हनुमान की तस्वीर वाली एक विशेष गुफा देखने लायक है। पहाड़ी की चोटी पर विशेष शेड बनाकर एक अद्भुत कार्य किया गया है। शानदार नज़ारों को देखते हुए ऐसा महसूस हो रहा था कि हम आस-पास के पहाड़ों की तरह ऊँचे खड़े हैं और हमारे पैरों के नीचे नदी की घाटी बह रही है। लेकिन यह व्यक्त करना बड़ा ही कठिन है कि इस जगह को इतना प्यारा क्या बनाता है। चाहे वह घाटी में गूंजती विशाल नदी की तेज़ गर्जना हो, दूर की पर्वत श्रृंखला के व्यापक दृश्य हों या इस जगह के आस-पास की मनमोहक कहानियाँ हों, इन सारे

नजारों को देख हम एक अलौकिक शक्ति की ओर आकर्षित हो रहे थे। इस स्थान से जुड़ी अपनी विभिन्न पौराणिक कथाओं के कारण, यह ओडिशा के लोगों के लिए बहुत धार्मिक महत्व रखता है। यहाँ मनाए जाने वाले प्रमुख त्यौहार चैत्र (अप्रैल) के महीने में पण संक्रांति, वैशाख (मई) के महीने में अक्षय तृतीया और दशहरा (अक्टूबर) हैं। इन त्यौहारों के महीनों में हजारों तीर्थयात्री इस पवित्र मंदिर में आते हैं।

घूमने का सबसे अच्छा समय अगस्त से फ़रवरी है। परिदृश्य में अंतर देखने के लिए किसी भी महीने में एक बार ज़रूर जाएँ।



परशुरामेश्वर मंदिर- वास्तुकला का एक उत्कृष्ट नमूना

श्री यशराज मिश्रा

लेखाकार



ओडिशा भारतीय उपमहाद्वीप के पूर्वी तट पर स्थित एक ऐतिहासिक और सांस्कृतिक दृष्टिकोण से समृद्ध राज्य है। यह राज्य प्राचीन समय से ही धार्मिक, सांस्कृतिक और स्थापत्य कला के दृष्टिकोण से महत्वपूर्ण रहा है। ओडिशा में अनेक ऐतिहासिक मंदिर स्थित हैं, जो न केवल भारतीय वैदिक सनातन धर्म के आस्थाओं के प्रतीक हैं बल्कि भारतीय वास्तुकला के अद्वितीय उदाहरण भी हैं। इन मंदिरों के स्थापत्य में ओडिशा की समृद्ध संस्कृति और इतिहास प्रदर्शित होता है।

ओडिशा की राजधानी, भुवनेश्वर में स्थित 7वीं और 8 वीं शताब्दी के बीच शैलोद्भव काल के प्रारंभिक ओडिशा हिंदू मंदिर के सबसे संरक्षित नमूनों में से एक है- परशुरामेश्वर मंदिर। यह मंदिर हिंदुओं द्वारा पूजित भगवान शिव को समर्पित है और राज्य के मौजूदा सबसे पुराने मंदिरों में से एक है। यह मंदिर हिंदू मंदिर वास्तुकला की नागर शैली का उत्कृष्ट उदाहरण है, जो उर्ध्वाधर संरचना पर जोर देता है। इस मंदिर में 10 वीं शताब्दी से पहले के कलिंग वास्तुकला शैली के मंदिरों की सभी मुख्य विशेषताएं हैं।

मंदिर का इतिहास:- परशुरामेश्वर मंदिर, परशुरामेश्वर मंदिरों के समूहों में से एक है जिसे भुवनेश्वर का सबसे पुराना मंदिर माना जाता है। कुछ इतिहासकारों का मानना है कि परशुरामेश्वर मंदिर का निर्माण 8 वीं शताब्दी की शुरुआत में हुआ था जो 7वीं शताब्दी के अंत में शत्रुगणेश्वर, भारतेश्वर

और लक्ष्मणेश्वर के निर्माण के बाद हुआ था, हालांकि कुछ पुरातत्वविदों ने इस मंदिर के निर्माण की तिथि 650 ई बताई है। आठ ग्रहों की उपस्थिति और उसकी शैली के आधार पर अधिकांश विद्वान 7वीं शताब्दी के मध्य की तिथि पर सहमत हैं, जो बाद के मंदिरों में नौ ग्रहों को चित्रित करते हैं, जबकि आंतरिक गर्भगृह के द्वार पर आठ ग्रह दिखाई देते हैं।

वास्तुकला:- परशुरामेश्वर मंदिर का निर्माण शैलोद्भव ने किया था, साथ ही मंदिर की मरम्मत 1903 में की गई थी, जिसमें आंतरिक गर्भगृह की छत में कुछ बदलाव किए

गए थे, जबकि मूल संरचना के अधिकांश हिस्से को बरकरार रखा गया था। पूर्वी तट पर स्थित होने के कारण परशुरामेश्वर मंदिर ओडिशा के अन्य मंदिरों की तरह 12-13 वीं शताब्दियों के मुस्लिम आक्रमणों से ज्यादा प्रभावित नहीं हुआ था। परशुरामेश्वर मंदिर के दो भाग हैं। (I) गर्भगृह जिसे “विमान” कहा जाता है तथा

(II) “जगमोहन”, जहां से तीर्थयात्री गर्भगृह को देखते हैं। परशुरामेश्वर मंदिर पहला ऐसा मंदिर है जिसमें जगमोहन नामक एक अतिरिक्त संरचना है। प्रारंभिक मंदिर बिना जगमोहन के थे जैसा कि भुवनेश्वर के कुछ पुराने मंदिरों में देखा गया है, जबकि बाद के मंदिरों में दो अतिरिक्त संरचनाएं थीं। जैसे कि नट-मंडप (उत्सव हॉल) और भोग-मंडप (प्रसाद का हॉल) विमान आकार में चौकोर



हैं। और दीवारों में ऐसे खंड हैं जिन्हें “रथ” या “पग” कहा जाता है। विमान में क्षैतिज तलों से बना पिरामिड रूपी एक वक्रतापूर्ण मीनार है जिसे बाड़ा कहा जाता है। “जगमोहन” आकार में आयताकार है और इसमें दो भाग वाली ढलान वाली छत है, जिसके बीच में खिड़कियां हैं जालीदार खिड़कियों को पाटा जाली के रूप में वर्गीकृत किया जाता है। जहाँ छिद्र चौकोर या आयताकार होते हैं। इसके अलावा, नर्तकियों और संगीतकारों को दर्शाली पत्थर की मूर्तियों के स्लैब के साथ जालीदार खिड़कियां हैं। प्रकाश, दरवाजों और जालीदार खिड़कियों के माध्यम से मंदिर के अंदर प्रवेश करता है।

हालांकि परशुरामेश्वर मंदिर एक शैव तीर्थस्थल है, लेकिन इसमें पार्श्व देवता के रूप में कई शाक्त देवताओं की छवियाँ इसके दीवार पर उकेरी गई हैं। यह मंदिर भुवनेश्वर के मंदिरों में पहला है जिसमें सप्त मातृकाओं अर्थात् चामुंडा, वराही, इंद्राणी, बैष्णवी, कौमारी, शिवानी और ब्राह्मी का चित्रण है ये चित्र गणेश और वीरभद्र के चित्रण के बीच में स्थित हैं। भगवान गणेश को छोड़कर अन्य सभी चित्रों को उनके संबंधित वाहनों के साथ दर्शाया गया है। मंदिर की दीवार पर आठ भुजाओं वाली नृत्य की मुद्रा में अर्धनारीश्वर, भगवान शिव और माता पार्वती की छवि और गंगा-यमुना की छवियां भी हैं। बरामदे के तल के चारों ओर विष्णु, इंद्र, सूर्य और यम की छवियां भी हैं।

दक्षिणी दीवार पर मोर वाहन पर सवार भगवान कार्तिकेय की एक मूर्ति मौजूद है। मंदिर में भगवान शिव द्वारा राक्षस राजा रावण को वश में करने की नक्काशी और तांडव नृत्य की विभिन्न मुद्राओं में भगवान शिव को नटराज के रूप में उकेरा गया है। मंदिर में छह भुजाओं वाली महिषासुर मर्दिनि (मां दुर्गा) की छवि का भी चित्रण है जिसमें मां दुर्गा आभूषण से अलंकृत, ऊपरी बाएं हाथ में तलवार पकड़े हुए,

जबकि उपरी दाएं हाथ में राक्षस भैंस का चेहरा दबाए हुए दिखाई पड़ती हैं। अपने बाएं मध्य हाथ में त्रिशूल से राक्षस की गर्दन भेदती हुई दिखाई देती हैं जबकि उनके निचले बाएं हाथ में एक नुकीला अस्त्र सुशोभित प्रतीत होता है। मां दुर्गा अपने दाहिने मध्य हाथ में खेटक रखती हैं जबकि निचले दाहिने हाथ में धनुष रखती दिखाई पड़ती है। इसके साथ-साथ मंदिर पर अन्य नक्काशी में विभिन्न प्रकार के फल, फूल, पक्षी और जानवरों के दृश्यों को दर्शाया गया है।

जगमोहन के स्तंभों और मंदिर के विमान के मुखों पर बेताल (भूतों) की विचित्र आकृतियां हैं। नागों और उनकी महिला समकक्ष नागिनों और अन्य महिलाओं की सुंदर आकृतियां पवित्र मुद्राओं सहित चित्रित हैं। विमान पर हिरणों को शिकारी से भागते हुए दृश्य को उल्लेखनीय रूप से दर्शाया गया है। जगमोहन की जालीदार खिड़की के चारों ओर बंदरों के रमणीय दृश्य दर्शाए गए हैं।

मंदिर का धार्मिक महत्त्व:- परशुरामेश्वर में भगवान शिव को भगवान परशुराम के आराध्य के रूप में दर्शाया गया है, जो भगवान विष्णु के दस अवतारों में से एक हैं। हिंदू किंवदंती के अनुसार इस मंदिर का नाम परशुराम की तपस्या और उसके फलस्वरूप भगवान शिव की कृपा से पड़ा है। परशुरामष्टमी आषाढ़ (जून-जुलाई) की अष्टमी तिथि को मंदिर में मनाया जाने वाला प्रमुख त्यौहार है, जब लिंगराज की उत्सव छवि को परशुरामेश्वर मंदिर ले जाया जाता है और भोज कराया जाता है।

राजारानी मंदिर और वैताल देउला (8वीं शताब्दी में निर्मित चामुंडा देवी का एक मंदिर) के साथ परशुरामेश्वर मंदिर 7वीं और 8 वीं शताब्दी ईस्वी के दौरान देवदासी परंपरा के अस्तित्व की भी पुष्टि करता है। इस मंदिर को शहर के सबसे पुराने मंदिरों में सबसे अच्छा संरक्षित नमूना माना जाता है।

गुप्तेश्वर महादेव

श्रीमती शान्तिलता सेठी

पर्यवेक्षक (सेवानिवृत्त)



गुप्तेश्वर गुफा भगवान शिव को समर्पित एक स्वयं-प्रकटित मंदिर है। यह एक तीर्थ स्थान हैं जो भारत के ओड़िशा राज्य जयपुर, कोरापुट जिले से 55 कि.मी. की दूरी पर स्थित है। कहा जाता है इस मंदिर का मुख्य आकर्षण विशाल शिवलिंग है जिसका आकार दिन प्रतिदिन बढ़ता रहता है। देशभर से तीर्थयात्री श्रावण मास के दौरान यहां महादेव के इस अद्भुत शिवलिंग के दर्शन के लिए आते हैं। यहां हर साल भोलेनाथ की यात्रा आयोजित की जाती है। तीर्थयात्री इस यात्रा के दौरान महादेव कुण्ड में स्नान करते हैं फिर शिवलिंग के दर्शन करते हैं।

साल के वृक्षों वाले घन जंगलों और कोलाव नदी से घिरे हुए गुफा के भीतर एक या दो मीटर ऊँचा लिंगम विराजमान है। इसलिए इस मन्दिर को “गुप्तेश्वर” कहा जाता है। वर्ष 1665 में जयपुर के राजा को इस शिवलिंग के बारे में पता चला था, तब से महादेव के इस विशाल शिवलिंग की पूजा जारी है। इसकी मुख्य गुफा से अलग अन्य गुफाएँ भी हैं।

पौराणिक कथाओं के अनुसार जब भगवान राम अपनी पत्नी सीता और भाई लक्ष्मण के साथ जंगल में घूम रहे थे तब उन्होंने पहली बार इस शिवलिंग को देखा था। कवि कालिदास ने अपनी प्रसिद्ध रचना “मेघदूत” में भी गुफा में अवस्थित इस मंदिर के संदर्भ में रामगिरि जिले की सुन्दरता का वर्णन किया है। कहा जाता है कि 19वीं शताब्दी के आखिर में भी रामगिरि क्षेत्र में एक शिकारी को लिंगम के बारे में जानकारी मिली। तब से कोरापुट क्षेत्र के लोगों द्वारा लिंगम की पूजा बड़ी ही श्रद्धा से की जाती है। शिवरात्रि के दौरान गुप्तेश्वर मंदिर में ओड़िशा के अलावा आन्ध्रप्रदेश और

छत्तीसगढ़ से आनेवाले भक्तों की संख्या लाख से अधिक होती है।

कोरापुट से गुप्तेश्वर मंदिर की गुफा की यात्रा अत्यंत सुखद है। सड़क के दोनों तरफ बड़े-बड़े पेड़ों से घिरा घना जंगल है। यहां बन्दरों का राज चलता है लेकिन वे यात्रियों को कभी कोई हानि नहीं पहुंचाते हैं। प्रकृति की गोद में स्थित यह एक अत्यंत सुन्दर पर्यटन-स्थल है। पहाड़ियों की घुमावदार सड़कों की यात्रा हमेशा से किसी यात्री के लिए विशेष अनुभव से कम नहीं होता है। दो पहाड़ों के बीच सूर्य को उगते हुए देखना सबसे मनमोहक दृश्य है। हाल ही में नया साल मनाने और नए साल में गुप्तेश्वर में जाकर भगवान शिव के दर्शन करने लगभग 75 लोग बहुत उत्साह से गए थे। परन्तु दुर्गम पहाड़ियों में चालक का लापरवाही से यूटर्न लेना एक दुखद दुर्घटना के रूप में साबित हुआ। इसलिए सरकार को पर्यटकों की सुरक्षा को ध्यान में रखकर इस सुंदर पर्यटन-स्थल को सुरक्षा-संसाधनों से सुसज्जित करने के लिए ठोस कदम उठाने चाहिए। साथ ही दक्ष वाहन-चालकों को सुरक्षा नियमों का पालन करते हुए नागरिकों सहित सरकार का सहयोग करना चाहिए। उन्हें इस पहाड़ी घाटी के घुमावदार रास्तों की जानकारी होना भी आवश्यक है ताकि दर्शनार्थियों का मूल्यवान जीवन बच सके।

अंततः यही कहना चाहूँगी कि सभी को भुवनेश्वर के गुप्तेश्वर गुफा में भगवान शिव को समर्पित विशाल लिंगम का दर्शन एक बार जरूर करना चाहिए। प्रकृति, धर्म एवं भगवान शिव की शरण में आकर इस गुफा में विचरण करने से निसंदेह मन को शांति एवं अध्यात्म की प्राप्ति होगी।

एकाम्र क्षेत्र के मंदिर : स्थापत्य एवं भक्ति का संगम

श्री प्रज्ज्वल उपाध्याय

सहायक लेखा अधिकारी



भारत के पूर्वी तट पर अवस्थित ओडिशा राज्य अपनी बेजोड़ स्थापत्य कला, कालजयी इतिहास, भाषा, कला व संस्कृति के लिए पूरे देश में एक अलग पहचान रखता है। वैसे तो ओडिशा में हजारों विशाल मन्दिर हैं पर राजधानी भुवनेश्वर के मंदिरों की बात ही कुछ और है। आज ये शहर 700 से अधिक प्राचीन मंदिरों का हृदय स्थान है। यही वजह है कि भुवनेश्वर को मंदिरों का शहर भी कहा जाता है। ऐसा माना जाता है कि भुवनेश्वर का इतिहास 2000 वर्षों से भी पुराना है। 7वीं से 13वीं शताब्दी तक यहाँ कई महान शासकों का राज रहा, जिन्होंने भुवनेश्वर में अनेक मंदिरों का निर्माण करवाया। ये आज भी अंगद के पैरों की भाँति अटल खड़े होकर उन साम्राज्यों के गौरवशाली इतिहास का बखान करते हैं।

भुवनेश्वर में स्थित अधिकतर मन्दिर भगवान शिव को समर्पित हैं। यहाँ तक कि भुवनेश्वर का नाम भी भगवान शिव के नाम “त्रिभुवनेश्वर” से निकल कर आया है, जिसका अर्थ है – तीनों लोकों के स्वामी। प्राचीन हिन्दू ग्रंथों के अनुसार, भुवनेश्वर भगवान शिव के सबसे पसंदीदा स्थानों में से एक था, जहाँ वे आम के वृक्ष के नीचे विश्राम करते थे। कालांतर में इसी क्षेत्र को “एकाम्र क्षेत्र” के नाम से जाना गया। आज यह स्थान पुराने भुवनेश्वर का स्वरूप धारण कर चुका है, जिसे आम नागरिक “ओल्ड टाउन” के नाम से भी जानते हैं। शहर के दक्षिणी भाग में स्थित इस क्षेत्र का फैलाव नागेश्वर टांगी से लेकर सामन्तरापुर तक है और इसके बीचों-बीच है बिंदु सागर, एक ऐसी झील जिसके चारों ओर अनगिनत मंदिरों का आविर्भाव हुआ और इसका धार्मिक

महत्त्व शताब्दी दर शताब्दी बढ़ता गया।

आइए आपको ले चलते हैं इसी ओल्डटाउन अर्थात् पुराने भुवनेश्वर के 15 प्रमुख मंदिरों की यात्रा पर, जिनकी अब्दुत छटा देखते ही बनती है और आपकी आस्था को एक नया आयाम प्रदान करती है।

राजारानी मन्दिर – रवि टॉकीज़ चौराहे से कुछ ही दूरी पर स्थित यह मन्दिर आज भारतीय पुरातत्त्व सर्वेक्षण द्वारा संरक्षित एक राष्ट्रीय धरोहर बन चुका है। इस मन्दिर को लाल व पीले बलुआ पत्थर से बनाया गया है। यह मन्दिर प्रेम मन्दिर के नाम से भी जाना जाता है क्योंकि इसमें कई युगल छवियों की चित्र कलाओं को स्थान दिया गया है। इस कारण यह मन्दिर मध्यप्रदेश के खजुराहो मन्दिर से मिलता जुलता प्रतीत होता है। राजारानी मन्दिर 11वीं शताब्दी की कलिंग स्थापत्य कला का बेजोड़ नमूना है। इस मन्दिर की सबसे खास बात यह है कि इसके गर्भगृह में कोई मूर्ति नहीं है, बल्कि मन्दिर की दीवारों पर नटराज व शिव-पार्वती विवाह को उकेरा गया है। वहीं कुछ शिलाएँ भगवान विष्णु को भी समर्पित हैं। इससे यह मन्दिर किसी एक सम्प्रदाय से जुड़ा हुआ नहीं है। यहाँ किसी भगवान की पूजा अर्चना नहीं होती, फिर भी हर साल बहुतायत में श्रद्धालु यहाँ की कलाकृतियाँ देखने आते हैं।

मुक्तेश्वर मंदिर—भगवान शिव को समर्पित इस मन्दिर को “कलिंग स्थापत्य का रत्न” भी कहा जाता है। यह मन्दिर एक शिला पर सन् 970 ईसवीं में बनाया गया था और इसे भुवनेश्वर के सबसे सुंदर मंदिरों में से एक माना जाता है। यह मन्दिर प्रारंभिक व परिपक्व ओडिशा मन्दिर

शैली के मध्य परिवर्तन को प्रतिफलित करता है। मन्दिर में प्रवेश करते ही भूमि पर इसकी स्थापत्य योजना उत्कीर्ण मिलती है। यह मन्दिर अपने “अनन्यतोरण” अर्थात् धनु आकार प्रवेश द्वार के लिए प्रसिद्ध है। यह मन्दिर पंचरथ योजना से बना है, जिस में “त्रिरंग बाड़” अर्थात् तीन तरफ उच्चावज है। इस मन्दिर के पश्चिम भाग में एक कुआँ भी है, जिसे “मरीचि कुण्ड” कहा जाता है। इस मन्दिर में पंचतंत्र के प्रसंग, माँ पार्वती की तपस्या एवं नृत्य करते गणेश दर्शाए गए हैं। इसी मन्दिर के उत्तर-पश्चिम भाग में सिद्धेश्वर मन्दिर स्थित है, जिसमें एक विमान (गर्भगृह) व सदृश जगमोहन (सभाकक्ष) भी पाया जाता है।

केदारगौरी मन्दिर— मुक्तेश्वर मन्दिर से महज चंद कदम की दूरी पर स्थित यह मन्दिर भुवनेश्वर के आठ अष्टशंभू मंदिरों में से एक है। इसका स्थापत्य सिद्धेश्वर मन्दिर के अनुरूप प्रतीत होता है। 10वीं शताब्दी में निर्मित यह दक्षिण मुखी मन्दिर कलिंग स्थापत्य का एक उत्तम उदाहरण है। किंवदन्ती व आध्यत्मिकता से परिपूर्ण इस मन्दिर के बारे में मान्यता है कि भगवान शिव माता पार्वती संग बनारस से यहाँ आए थे। ऐसा माना जाता है कि इसके परिसर में स्थित पोखर में औषधीय गुण पाए जाते हैं। पंचायतन शैली में निर्मित इस मन्दिर में एक विमान और पिरामिड आकार का जगमोहन है। इसके परिसर के बीच गौरी मन्दिर अवस्थित है, जो खाकरा क्रम में निर्मित हुआ था। इस मन्दिर के पीठासीन देवता केदार एवं देवी गौरी भक्तों को सहज ही आकर्षित करते हैं, विशेष रूप से वैवाहिक सौहार्द की कामना लिए आने वाले दंपति श्रद्धालुओं को। एकाग्र पुराण के अनुसार इसके शिवलिंग “केदारेश्वर” के सम्मुख 12 दिनों तक ध्यान करने से परम ज्ञान की प्राप्ति होती है।

परशुरामेश्वर मन्दिर — इस मन्दिर का निर्माण सन् 650 ईसवी में शैलोद्भव काल में हुआ था। पश्चिमोन्मुख यह मन्दिर प्रारंभिक ओडिशा वास्तुकला के अन्यतम पर्यायों में

से एक है। भुवनेश्वर के सबसे पुराने मंदिरों में से एक यह मन्दिर नागर शैली में निर्मित ओडिशा का पहला मन्दिर था। इस मन्दिर में भगवान शिव को विष्णु के षष्ठ अवतार परशुराम के आराध्य देव के रूप में चित्रित किया गया है। यह एकाग्र क्षेत्र का पहला ऐसा मन्दिर है, जिस में जगमोहन को विमान के साथ ही जोड़ दिया गया है। त्रिरथ योजना में निर्मित इस मन्दिर में शिव, विष्णु, दुर्गा व गणेश की प्रतिमाएँ मिलती हैं। द्वारबंध के ऊपर ललाट बिंब में अष्टग्रहों की प्रतिमा का अंकन है। मन्दिर का शिखर स्थूल व कम ऊँचाई वाला है। जगमोहन आयताकार व छत समतल है। छत को सहारा देने के लिए एकाग्र पत्थर के छः स्तम्भ दो पंक्तियों में व्यवस्थित हैं। भगवान शिव से संबंधित तीन महत्वपूर्ण घटनाएँ यहाँ उकेरी गयी हैं — रावण द्वारा कैलाश पर्वत को उठाना, अन्नपूर्णा द्वारा शिव को भिक्षा देना एवं शिव का ऐश्वर्यिक विवाह। मन्दिर के उत्तर पश्चिमी भाग में 1008 शिव लिंग स्थित हैं।

तालेश्वर मन्दिर — बिंदुसागर के उत्तर-पूर्वी छोर पर बसा यह मन्दिर एकाग्र क्षेत्र के अन्यतम मंदिरों में से एक है। बौद्ध शैली द्वारा अनुप्रेरित यह मन्दिर एक त्रिरथ मन्दिर है। इस मन्दिर के विमान का ऊपरी भाग बहुत पहले विलुप्त हो चुका है। तालेश्वर मन्दिर की एक खास बात यह है कि इसमें कोई भी जगमोहन नहीं है। बेताल देउल मन्दिर के समकालीन इस मन्दिर में एक समय में लकुलिश एवं अर्धनारीश्वर सहित अनेक मूर्ति कलाएँ सुशोभित थीं, जिन्हें वर्तमान समय में ओडिशा राज्य संग्रहालय में स्थानान्तरित किया जा चुका है। आज इस मन्दिर का INTACH द्वारा जीर्णोद्धार किया जा रहा है।

बेताल देउल मन्दिर— बेताल मन्दिर एकाग्र क्षेत्र का एक अनूठा मन्दिर है। 8 वीं शताब्दी में निर्मित यह मन्दिर एक स्वतन्त्र देवी पीठ है। इस तांत्रिक पीठ की अधिष्ठात्री देवी माँ दुर्गा का रूप चामुण्डा हैं, जिन्हें स्थानीय लोगों द्वारा

कापालिनी के नाम से जाना जाता है। तिनिमुण्डीय मन्दिर के नाम से भी विख्यात इस मन्दिर को खाकरा शैली में बनाया गया था, जिससे यह दक्षिण भारतीय शैली के गोपुरम जैसा प्रतीत होता है। कुछ अनुयायियों के अनुसार इस मन्दिर का नामकरण “बोईतालु” अर्थात् कहू जैसे प्रतीत होने के कारण बेताल पड़ा है। वहीं मन्दिर के सेवादारों के अनुसार बेताल नाम यहाँ की तंत्रपूजा पद्धति के चलते आया है। इस मन्दिर की शिलाओं में सूर्य, नटराज, गणेश, लकुलिश एवं महिषामर्दिनी के सुंदर चित्र उत्कीर्ण मिलते हैं। इसी प्रांगण में अवस्थित शिशिरेश्वर मन्दिर ललित गिरि में स्थित बौद्ध मठ से काफी मिलता-जुलता है।

मैत्रेश्वर मन्दिर – पाप नाशिनी कुण्ड के निकट अवस्थित यह मन्दिर भगवान लिंगराज के मामा के निवास स्थान के रूप में पूजा जाता है, जो प्रथमाष्टमी के दिन उनसे मिलने आते हैं। गंग शासन के दौरान 12-14 वीं शताब्दी के बीच पंचरथ शैली में निर्मित इस मन्दिर के नामकरण को लेकर कई मत प्रचलित हैं। एक मत के अनुसार इस मन्दिर का नाम लकुलिश के शिष्य मित्र के नाम पर पड़ा है, वहीं विरोधी मत इसे काशी की रानी मित्रावती के साथ जोड़कर देखते हैं, जिन्होंने इसका निर्माण करवाया था। इस मन्दिर का आधा खंडित शिखर इसे अनूठा बनाता है। जहाँ इसका विमान बलुआ पत्थर का बना है, वहीं जगमोहन लेटराइट से बनाया गया है। इस मन्दिर की नवग्रह पट्टी के नीचे महालक्ष्मीजी की एक प्रतिमा भी सुशोभित है।

जमेश्वर मन्दिर – 13 वीं शताब्दी में गंगवंश शासन में निर्मित यह मन्दिर भारती मठ के सामने स्थित है। एकाम्र चंद्रिका के अनुसार यह मन्दिर स्वयं यम ने बनवाया था। स्थानीय मान्यता के अनुसार कार्तिक मास की शुक्लपक्ष द्वितीया (यम द्वितीया) को यहाँ पूजा अनुष्ठान कराने से भक्तों की सभी मनोकामनाएं पूर्ण होती हैं। इसी समय प्रभु लिंगराज के चलित प्रतिमा स्वरूप “चंद्रशेखर” अपनी बहन

कामाक्षी से मिलने भारती मठ जाते हैं और वहाँ से पालकी में बैठकर जमेश्वर मन्दिर आते हैं क्योंकि जमेश्वर प्रभु लिंगराज के जीजा जी हैं। इस मंदिर के चारों ओर प्राचीर में शिवलिंग के छोटे-छोटे रूप उकेरे गए हैं, जो इस मन्दिर का एक अनन्य विशेष तत्त्व है।

श्रीलिंगराज मन्दिर – यह मन्दिर भुवनेश्वर का सबसे बड़ा व सबसे अधिक मान्यता प्राप्त मन्दिर है, जो भगवान शिव एवं विष्णु के एकात्म स्वरूप हरिहर जी को समर्पित है। इसका निर्माण 7वीं शताब्दी में राजा जजाति केशरी ने कराया था। इस मन्दिर के शिखर की ऊंचाई 180 फीट है और इसके गर्भ गृह में सुशोभित शिवलिंग ग्रेफाइट का बना हुआ है। ऐसी मान्यता है कि यह शिवलिंग स्वयं ही इस स्थान पर प्रकट हुआ था, जिस वजह से इस शिवलिंग को “स्वयंभू” भी कहा जाता है। पवित्र शिवरात्रि पर्व पर इस मन्दिर की अद्भुत छटा चहुँ ओर बिखर जाती है। मन्दिर के कुल चार प्रमुख भाग हैं गर्भगृह, यज्ञशाला, भोगमंडप एवं नाट्यशाला। इस मन्दिर के एक कोने पर माता भगवती का छोटा सा मन्दिर स्थित है, वहीं दूसरे छोर पर देवी पदहारा कुण्ड है, जिसमें बड़ी संख्या में श्रद्धालु स्नान करते हैं।

गंगेश्वर-जमुनेश्वर मन्दिर – लोक कथा के अनुसार माँ पार्वती को कीर्तिववास का वध करने के उपरांत प्यास लगी, जिसे बुझाने के लिए शिवजी ने अपना त्रिशूल ज़मीन में गाड़ दिया। इससे एक धारा सहज ही बह चली। इस धारा को पवित्र करने के लिए माँ गंगा व यमुना को निमंत्रण देकर आह्वान किया गया। गंगशासन के दौरान 13-14 वीं शताब्दी में इस युग्म मन्दिर का निर्माण हुआ। दोनों मन्दिर पंचरथ शैली में वर्गाकार विमान व खुले आंगन सहित बनाए गए हैं।

लक्षेश्वर मन्दिर – यह मन्दिर लिंगराज मार्केट कॉम्प्लेक्स के पीछे गंगा यमुना रोड के दाहिने ओर अवस्थित है। सप्तरथ योजना में निर्मित इस मन्दिर में केवल एक ही विमान मौजूद है और कोई भी जगमोहन नहीं है। इसका द्वारबंध एक

आधुनिक संयोजन है। वृत्ताकार योनि के मध्यस्थ शिवलिंग इस मन्दिर के अलंकृत देवता हैं।

गौरीशंकर मन्दिर – यह एक छोटा सा शिव पीठ है, जो लिंगराज मन्दिर के रास्ते में बिंदुसागर रोड पर अवस्थित है। यह मन्दिर आंशिक रूप से ज़मीन में गड़ा हुआ है। इसका विमान संकीर्ण सीढियों द्वारा प्रवेश योग्य है, किंतु इसमें कोई जगमोहन नहीं है। गर्भगृह के भीतर एक शिवलिंग वृत्ताकार योनि पीठ पर स्थापित है। इसके साथ ही पार्वती व चतुर्भुज गणेश पद्मपीठ पर विराजमान हैं। इसकी अवस्थिति के कारण इस मन्दिर को “ट्रैफिक महादेव” के नाम से भी जाना जाता है।

अनंत वासुदेव मन्दिर – बिंदुसागर के तट पर अवस्थित यह मन्दिर 13 वीं शताब्दी में बनाया गया था। 17वीं शताब्दी में मराठा शासकों ने इस मन्दिर का जीर्णोद्धार कराया, जब उन्होंने ओडिशा तक अपना साम्राज्य बढ़ा लिया था। यह मन्दिर भगवान विष्णु के रूप कृष्णजी को समर्पित है। जहाँ भुवनेश्वर के अधिकतर मन्दिर शैव सम्प्रदाय से संबंधित हैं, यह मन्दिर वैष्णव संप्रदाय से ताल्लुक रखता है। यह मन्दिर अपने स्थापत्य में लिंगराज मन्दिर से काफी मिलता है। इसके गर्भगृह में स्थापित कृष्ण, बलराम व सुभद्रा की मूर्तियाँ काले ग्रेनाइट से बनी हुई हैं, जो कि पुरी के श्री मन्दिर की काठ की मूर्तियों से काफी अलग हैं। इस मन्दिर की दीवारों व स्तंभों में अनगिनत सुंदर उत्कीर्ण चित्र मिलते हैं।

कोटितीर्थेश्वर मन्दिर– यह मंदिर सोमवंशी राजाओं द्वारा कलिंग पंचरथ योजना में बनवाया गया था। इसके नाम का महत्त्व यह है कि कोटितीर्थ कुण्ड में डुबकी लगाकर मन्दिर के गर्भगृह में स्थापित शिवलिंग के दर्शन करने से एक

करोड़ तीर्थ यात्राओं के बराबर पुण्य प्राप्ति होती है। पीढ़े देउल (पिरामिड) ढांचे में निर्मित इस मन्दिर में चैत्रमास में अधिक श्रद्धालु आते हैं। कारण यह है कि इस मास में पड़ने वाली दमनांक चतुर्दशी के दिन प्रभु लिंगराज के चलित प्रतिमा स्वरूप “चंद्रशेखर” को यहाँ उपासना के लिए लाया जाता है।

और आइए अब हमारी यात्रा की समाप्ति करते हैं स्वर्ण जालेश्वर मन्दिर के साथ, जो संभवतः भुवनेश्वर का सबसे पुराना मन्दिर है। मेरा ऐसा विश्वास है कि इस मानसिक यात्रा के बाद आप स्वयं एकाम्र क्षेत्र के इन मंदिरों की गाथा सुनने व ऐश्वर्य देखने अवश्य जाएंगे।

स्वर्ण जालेश्वर मन्दिर का निर्माण शैलोद्भव राजाओं द्वारा 7 वीं शताब्दी में कलिंग त्रिरथ धारा में मात्र एक विमान के साथ किया गया था। कोटि तीर्थ गली में ही अवस्थित यह मन्दिर भी एक शिवपीठ है। यह मन्दिर परशुरामेश्वर मन्दिर का समकालीन है और ऐसा माना जाता है कि एकाम्र क्षेत्र के अन्य सभी मंदिरों के स्थापत्य की प्रेरणा यहीं से ली गयी है। यह मन्दिर पूर्णतः जीर्ण-शीर्ण अवस्था में था और इसका पुनर्निर्माण किया गया है। इसकी दीवारों पर पवित्र रामायण की कथावस्तु आधारित सुंदर चित्र उकेरे गए हैं। वहीं पूर्ण कलशधारी एक खंडित नागकृति मूर्ति भी यहाँ मौजूद है। इस मन्दिर की विशेष बात यह है कि यहाँ आयताकार शक्ति स्वरूप पाया जाता है, जबकि अन्य मंदिरों में यह वृत्ताकार है। प्राचीन मन्दिर होने के बावजूद इस मन्दिर का सम्पूर्ण रखरखाव आज भी निजी प्रयासों द्वारा किया जाता है, जो इसे खास बनाता है।

ओडिशा: मंदिरों का घर



श्री शुभम पात्रो

सुपुत्र- श्री टी. प्रसाद राव पात्रा, लेखाकार

ओडिशा धरा, भक्ति का घर
मंदिरों में जग उज्ज्वल कर
पुरी जगन्नाथ, भक्तों की आशा
चंद्रभागा तट पर, भक्ति की माला
कोणार्क सूर्य मंदिर, कला का संगम
नृत्य करती मूर्तियाँ, रौशनी का प्रभामंडल
भुवनेश्वर लिंगराज मंदिर, शिव का निवास
भक्तों के लिए आनंद का सागर
जयदेव की भूमि, बाराही देवी का मंदिर
भक्ति का तीर्थ, शांति का केंद्र
ओड़िशा के मंदिर, विश्व की धरोहर
भक्ति, संस्कृति और कला का संगम
जय जगन्नाथ, जय महादेव
जय ओडिशा, जय भारत।

ॐ ॐ ॐ

ओडिशा के मंदिरों की स्थापत्यकला में बौद्ध, जैन और जनजातीय प्रभाव

श्री आलोक कुमार मौर्य

सहायक लेखा अधिकारी



ओडिशा की धार्मिक परंपराएँ गहरी ऐतिहासिक और सांस्कृतिक जड़ों से जुड़ी हैं। ओडिशा अपनी अद्वितीय मंदिर वास्तु कला के लिए प्रसिद्ध है, जो विभिन्न धार्मिक परंपराओं का समन्वय प्रस्तुत करती है। यह सर्व विदित है कि ओडिशा के ज्यादातर मंदिर हिंदू धर्म से जुड़े हुए हैं परंतु इन मंदिरों पर कुछ अन्य परंपराओं का भी गहरा प्रभाव पड़ा है। पुरी का जगन्नाथ मंदिर इस समन्वय का एक उत्कृष्ट उदाहरण है लेकिन राज्य के अन्य प्रमुख मंदिरों जैसे कोणार्क का सूर्य मंदिर, लिंगराज मंदिर और राजारानी मंदिर में भी बौद्ध धर्म, जैन धर्म और जन जातीय संस्कृति के प्रभाव स्पष्ट रूप से दिखाई देते हैं। इन मंदिरों की स्थापत्य विशेषताएँ, मूर्ति कला और धार्मिक अनुष्ठान ओडिशा की समृद्ध सांस्कृतिक परंपराओं का प्रतिनिधित्व करते हैं।

जनजातीय संस्कृति का प्रभाव

ओडिशा में पुरी स्थित जगन्नाथ मंदिर का विशेष

महत्व है। जगन्नाथ मंदिर के निर्माण से जुड़ी कहानी के अनुसार, भगवान विष्णु ने स्वयं सबर जनजाति के राजा (मुखिया) विश्व वसु को अपने नील माधव रूप में दर्शन दिए। सबर राजा पहले से ही भगवान विष्णु के आदिवासी स्वरूप भगवान जगन्नाथ की पूजा जंगल में किया करते थे। उस राज्य के राजा का नाम इंद्रद्युम्न था, जो भगवान विष्णु के बहुत बड़े भक्त थे। राजा के स्वप्न में भगवान विष्णु ने निर्देश दिया कि वह एक पवित्र लकड़ी (जिसे दारुब्रह्म कहा जाता है) का पता लगाएं और उनकी मूर्ति का निर्माण करें। राजा इंद्रद्युम्न ने सबर राजा की सहायता से दारुब्रह्म को खोज कर भगवान जगन्नाथ, बलभद्र और सुभद्रा की मूर्तियों का निर्माण करवाया। कहा जाता है कि इसके बाद भगवान नीलमाधव की पूजा से ही भगवान जगन्नाथ की पूजा की शुरुआत हुई और बाद में मुख्य धारा की एक प्रमुख पूजा बन गई।

भारत के अन्य मंदिरों में भगवान की मूर्ति का एक मानवीय स्वरूप होता है जो पत्थरों से बना होता है परंतु भगवान जगन्नाथ, बलभद्र और माता सुभद्रा की मूर्तियाँ गैर मानवीय और अमूर्तरूप (abstract form) में लकड़ी से बने हुए हैं। यह इस मामले में काफी अनोखा है। भगवान जगन्नाथ की मूर्ति का हर 12-19 साल में नवीनीकरण (नवकलेवर) होता है, जो नीम की लकड़ी से बनाई जाती है, जिसमें जनजातीय कारीगरों और पुरोहितों की विशेष भूमिका



होती है। कुछ अन्य परंपराएं जैसे रथयात्रा (देवताओं को विशाल रथों पर ले जाने की परंपरा) जनजातीय जुलूस और शोभा यात्राओं से प्रेरित है।

जगन्नाथ मंदिर के अलावा अन्य मंदिरों में भी जनजातीय संस्कृति का प्रभाव दिखता है। कोणार्क सूर्य मंदिर में सूर्यदेवता के रथ और उसके 12 पहिये जनजातीय सूर्य पूजा का प्रतिनिधित्व करते हैं। पहियों में कृषि और प्रकृति से जुड़े प्रतीक भी जनजातीय जीवन का हिस्सा हैं। यह माना जाता है कि लिंगराज



मंदिर की उत्पत्ति एक पुराने जनजातीय देवता एकमेश्वर की पूजा से हुई थी। शिव को स्थानीय जनजातियों ने एक प्राकृतिक शक्ति के रूप में पूजा।

बौद्ध धर्म का प्रभाव

बौद्ध धर्म का ओडिशा में प्रवेश तीसरी शताब्दी ईसा पूर्व में सम्राट अशोक के समय हुआ था। अशोक ने धर्म प्रचार के लिए भारत के विभिन्न हिस्सों में स्तूपों, धम्म शिला लेखों और बौद्ध भिक्षुओं के माध्यम से बौद्ध धर्म का प्रसार किया। ओडिशा में भी अशोक के शासन काल में बौद्ध धर्म ने जड़ें जमा लीं और यहां के धार्मिक और सांस्कृतिक जीवन का यह एक महत्वपूर्ण हिस्सा बन गया।

बौद्ध गुफाएँ और स्तूप ओडिशा में बौद्ध धर्म के प्रभाव का प्रमुख उदाहरण हैं। उदयगिरि और खंडगिरि की गुफाएं इस कड़ी में शामिल हैं। इन गुफाओं में बौद्ध धर्म से संबंधित महत्वपूर्ण संरचनाएँ पाई जाती हैं, जिनमें चैत्यगृह, विहार, और स्तूप शामिल हैं। इन गुफाओं में उकेरी गई बौद्ध भिक्षुओं की मूर्तियाँ और धार्मिक चित्र ओडिशा के बौद्ध प्रभाव को दर्शाते हैं। इन गुफाओं की स्थापत्य शैली बौद्ध धर्म की शांति और साधना के सिद्धांतों की ओर ध्यान आकर्षित करती है और इन गुफाओं में ध्यान और साधना के लिए

पर्याप्त स्थान प्रदान किया गया है।

कोणार्क सूर्य मंदिर में भी बौद्ध वास्तु कला के तत्व देखे जा सकते हैं। हालांकि यह मंदिर मुख्यतः सूर्य देवता को समर्पित है लेकिन इसके निर्माण में बौद्ध स्थापत्य शैली का प्रयोग हुआ है। उदाहरण के लिए, मंदिर का रथ जैसा आकार और उसमें सूर्य के 12 पहिए बौद्ध धर्म के काल चक्र के विचारों से प्रेरित हैं। इस मंदिर की शैली में बौद्ध धर्म के स्तूप और चैत्य गृह की झलकियाँ मिलती हैं, जो समय के चक्र और सूर्य की शक्ति को दर्शाते हैं।

बौद्ध धर्म की मूर्तिकला और शिल्प कला ने ओडिशा के मंदिरों की स्थापत्य कला को प्रभावित किया। बौद्ध धर्म में उकेरी हुई मूर्तियाँ और धार्मिक चित्रण का प्रयोग अधिक था, जो बाद में ओडिशा के मंदिरों में भी दिखाई दिया।

जैन धर्म का प्रभाव

जैन धर्म ने ओडिशा में पांचवीं शताब्दी ईसा पूर्व में प्रवेश किया था। जैन धर्म की मुख्य विशेषताएँ अहिंसा, साधना, और शांति थीं, जो ओडिशा की सांस्कृतिक जीवन शैली का हिस्सा बन गईं। जैन धर्म के अनुयायी महावीर की पूजा करते थे और इसके प्रभाव से कई जैन मंदिर और मूर्तियाँ ओडिशा में पाई जाती हैं।

ओडिशा में कई जैन मंदिर हैं जो जैन धर्म की पूजा पद्धतियों और शिल्पकला को दर्शाते हैं। इनमें विशेष रूप से बालासोर, कटक, और भुवनेश्वर के आसपास कुछ प्रमुख स्थल शामिल हैं।

जैन मंदिरों में पत्थर की मूर्तियों का प्रयोग किया जाता था, जिन्हें बहुत ही सुंदर और सटीक रूप से उकेरा गया था। जैनधर्म की मूर्तियों में विशेष रूप से महावीर स्वामी की मूर्तियाँ प्रमुख होती थीं। ओडिशा के जैन मंदिरों में रथ शैली की मूर्ति कला का प्रभाव देखा जा सकता है, जो मंदिर के आंतरिक और बाह्य सजावट में दिखाई देता है।

जैन धर्म के सिद्धांत और स्थापत्य का प्रभाव ओडिशा के मंदिरों की वास्तु कला में विशेष रूप से देखा गया है, जहां पूजा स्थल के भीतर साधना, शांति, और प्राकृतिक सौंदर्य पर अधिक ध्यान दिया गया। जैन मंदिरों में साधारणता और सौंदर्य का संतुलन देखने को मिलता है। इनके भीतर हवादार क्षेत्र, ध्यान केंद्र और साफ-सुथरी मूर्तियाँ जैन धर्म की शिक्षाओं को दर्शाती हैं।

ओडिशा में जैन धर्म और अन्य धर्मों के बीच एक सांस्कृतिक समन्वय देखा जाता है। जैन धर्म ने यहां के स्थानीय शिल्पकारों और कलाकारों को एक नया दृष्टिकोण दिया, जिससे ओडिशा की वास्तुकला में बौद्ध धर्म, हिंदू धर्म और जैन धर्म का सुंदर समन्वय हुआ। जैन धर्म का प्रभाव ओडिशा के मंदिरों में ध्यान, साधना और प्राकृतिक सौंदर्य के प्रतीक के रूप में स्पष्ट रूप से देखा जा सकता है।

ओडिशा के मंदिरों की वास्तुकला और परंपराएँ इन तीन धार्मिक और सांस्कृतिक परंपराओं के प्रभावों का अद्वितीय संगम प्रस्तुत करती हैं। जनजातीय संस्कृति ने मंदिरों की मौलिकता और प्राकृतिक प्रतीकवाद को प्रेरित किया, बौद्ध धर्म ने समतावाद और प्रतीकात्मकता को जोड़ा और जैन धर्म ने सादगी, शुद्धता और ध्यान की भावना का समावेश किया। ये प्रभाव न केवल ओडिशा की सांस्कृतिक विरासत को समृद्ध करते हैं बल्कि धार्मिक समन्वय और सह-अस्तित्व के अद्वितीय उदाहरण भी प्रस्तुत करते हैं।



आदिवासियों की परंपराएँ

श्री चार ओराम

वरिष्ठ लेखा अधिकारी



ओडिशा राज्य का भारत के मानव जाति विज्ञान के मानचित्र में अपना एक विशेष स्थान है, क्योंकि यहाँ सबसे ज्यादा आदिवासी समुदाय के लोग रहते हैं। आदिवासी लोगों द्वारा पालन किया जाने वाला धर्म दूसरे लोगों के धार्मिक जीवन से थोड़ा अलग है और अलग तरीके से मनाते हैं। यही कारण है कि उनकी धर्म परंपराएं अनोखी दिखती हैं। सूर्य देवता या धर्म देवता को ओडिशा की जनजातियों का सर्वोच्च देवता माना जाता है। उन्हें सिंग बोंगा और ओडिशा की विभिन्न जनजातियों में अन्य नामों से भी जाना जाता है। आदिवासी उन्हें पतली धरती का निर्माता भी मानते हैं जिन्होंने इसे तरल अवस्था से ठोस रूप में लाया है। सरना धर्म और आदि धर्म में ग्राम देवी की पूजा ओडिशा के आदिवासी लोगों के धार्मिक जीवन में विशेष स्थान रखती है। ओडिशा की जनजातियों में उन्हें अलग-अलग नामों से जाना जाता है। उन्हें ओरांव जनजाति में सामा बूढ़ी (सरना आयो और चाला आयो), संथालों और मुंडाओं में जाहिरा एरा, भुइयां में ठकुरानी मां और जुआंग जनजाति में ग्रामसिरी के नाम से जाना जाता है। उन्हें आम तौर पर लकड़ी के खंभे या पत्थर से दर्शाया जाता है और शयनगृह के पास रखा जाता है। उन्हें गांव की रक्षा करने वाली देवी माना जाता है। ये लोग मातृ देवी की भी पूजा करते हैं। उन्हें उनके द्वारा धरणी पेनु, धरणी माता, बसु माता के नाम से जाना जाता है। उन्हें उर्वरता की देवी माना जाता है। आदिवासी लोग पहाड़ी देवता को भी बहुत मानते हैं। जुआंग लोग उन्हें थानापति के नाम से जानते हैं। वे लोग पोडू चासा या स्थानांतरित खेती अधिक करते हैं, इसलिए वे इस पहाड़ी देवता की पूजा करते हैं। उनकी

मान्यता है कि इससे पहाड़ी देवता खुश होकर खेती में अधिक पैदावार देंगे तथा उनके जीवन को खुशहाल बनाएंगे। ओडिशा के आदिवासी लोग आत्माओं में विश्वास करते हैं। आदिवासी लोग अपने मृत पूर्वजों को दयालु आत्मा मानते हैं। उन्हें “पितृकी” के रूप में जाना जाता है। शुभ अवसरों पर उन्हें भोजन कराया जाता है। कई अवसरों जैसे शादी और ऐसे ही अन्य अवसरों पर वे अपने काम में सफल होने के लिए इन अदृश्य पूर्वजों की सहमति लेते हैं।



सरना आयो

आदिवासी लोग देवी-देवताओं की भी पूजा करते हैं। उनका रुझान धीरे-धीरे देवी-देवताओं की पूजा करने के तरीकों की ओर बढ़ रहा है। ये लोग भगवान शिव और देवी पार्वती की भी पूजा करते हैं। वे राम और सीता की भी पूजा करते हैं। वे काली और दुर्गा की भी पूजा करते हैं। धार्मिक पूजा के लिए वे लोग पुजारियों पर निर्भर रहते हैं। उन्हें जानी, देहुरी, नागम, माझीबुधा और इसी तरह के कई नामों से जाना जाता है। उनके बिना धार्मिक समारोह नहीं हो सकते। उन लोगों का मानना है कि उनके माध्यम से देवी-देवता भविष्य में होने वाली उत्पादन या आपदाओं के बारे में संदेश देते हैं और इसलिए जनजातियाँ इन अप्रत्याशित खतरों के बारे में सतर्क हो जाती हैं। वे कई धार्मिक त्यौहार मनाते हैं। ये त्यौहार ज्यादातर कृषि से जुड़े होते हैं। चूंकि आदिवासी मुख्यतः झूम खेती पर निर्भर हैं, इसलिए वे भूमि से जुड़े त्यौहार मनाते हैं। “पूस पुनेई” ऐसा ही एक त्यौहार है। “माघ जात्रा” भूमि की उर्वरता बढ़ाने के लिए मनाया जाता है। “चैत्र परब” में गांव के युवक-युवतियाँ नाचते-गाते हैं और इस अवसर का जश्न मनाते हैं। विवाह आदि उत्सवों को छोड़कर, ओडिशा की जनजातियों के त्यौहार मुख्यतः कृषि से जुड़े होते हैं।

जनजाति समुदाय के लोग बहुत ही सरल तरीके से अपने प्रथा की ओर अग्रसर होते हैं। सबसे पहले पुजारी उस स्थान पर गाय के गोबर में मिला हुआ पानी छिड़कता है, जहाँ अनुष्ठान किया जाना है। उसके द्वारा हल्दी पाउडर से एक घेरा बनाया जाता है। फिर वह घेरे के अंदर सिंदूर डालता है। उसके द्वारा देवताओं को दूध, गुड़, शराब, मुर्गा, अंडे चढ़ाए

जाते हैं। फिर पुजारी देवताओं के सामने कुछ शब्द बोलता है और स्वास्थ्य, खुशी, समृद्धि, भरपूर फसल, रोगमुक्त समुदाय आदि के लिए उनका आशीर्वाद मांगता है।

समय के साथ-साथ उन्होंने धार्मिक परंपराओं का पालन करना शुरू कर दिया है। उदाहरण के लिए, जुआंग लोग गोनासिक मंदिर के भगवान शिव और देवी पार्वती को सर्वोच्च देवता मानते हैं। “कमांडा” जुआंग लोगों का धार्मिक विशेषज्ञ है और “नागम” गांव का धार्मिक मुखिया है। कई शुभ अवसरों पर कमांडा अपने साथी ग्रामीणों को दावत देता है। प्रधान जुआंग गांव का धर्मनिरपेक्ष मुखिया होता है और वह धार्मिक समारोहों में कमांडा का सहयोग करता है। प्रधान के अलावा, “नाइक”, “डांगुआ” और “अधिकारी” जैसे अन्य धार्मिक पदाधिकारी विभिन्न धार्मिक समारोहों में भाग लेते हैं। इसी तरह अन्य जनजातियाँ हिंदू सांस्कृतिक विशेषताओं को अपना रही हैं। हालाँकि, “जानी”, “देहुरी”, “माझीबुधा” और इसी तरह के धार्मिक प्रमुख, जनजातियों के धार्मिक समारोहों में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं।

इस प्रकार, आदिवासी लोगों में कई धार्मिक आस्थाएँ और विश्वास हैं। वे मुख्य रूप से धरती, जंगल, पहाड़, सूर्य आदि जैसे विभिन्न रूपों के माध्यम से प्रकृति की पूजा में विश्वास करते हैं। वे मृत्यु के बाद जीवन में भी विश्वास करते हैं और हर शुभ समारोह के दौरान अपने पूर्वजों को सम्मान देते हैं। आदिवासी समुदाय साथ ही जाय धर्म और सारना धर्म की ओर पूर्वजों से ज्यादा अग्रसर होते हुए अपनी परंपराओं को अगली पीढ़ी के लिए मजबूत इरादों से आगे लिए चले जा रहे हैं।

दिव्य अनुभूति

श्री दीपक यादव

सहायक लेखा अधिकारी



जब हम एक मंदिर को देखते हैं तो उसकी विशालता और भव्यता से वशीभूत हो जाते हैं और कुछ क्षणों के लिए ही सही हमारा मन इस धरातल को छोड़ दैवीय महानता से जुड़ जाता है। मंदिरों को बनाया ही इस प्रकार से जाता है कि भक्त को यहाँ आने से भगवान की महानता और अपनी तुच्छता का एहसास हो, जिससे उसका अहम मिट जाए, क्योंकि अहम भाव मिटने के बाद ही आत्मा का मिलन परमात्मा से हो सकता है और आत्मा से परमात्मा का यह मिलन और खुद को भुला देना ही आध्यात्म की पहली सीढ़ी है।

जब हम इन विशाल भव्य मंदिरों को देखकर वशीभूत हो जाते हैं तो हमारे मन में यह विचार अवश्य ही आता है कि



इतने समय पहले, इतने विशाल शिलाखण्डों को कैसे खड़ा किया गया होगा? क्या तकनीक लगाई गई होगी? नक्काशियाँ जो इतनी जटिल हैं, क्या एक ही व्यक्ति के द्वारा की गई या बहुत से नक्काशीकार इतने निपुण थे कि एकदम हूबहू

नक्काशियाँ इतनी बड़ी संख्या में बनाई गई? कौन-सी अभियांत्रिकी प्रयोग में लाई गई होगी। अक्सर आज की उन्नत प्रौद्योगिकी पर गर्व करने वाले हम आज के आधुनिक लोग इन मंदिरों की जटिलता, विशालता और सटीकता को देखकर यही सोचते हैं कि क्या इन्हें वास्तव में इंसानों द्वारा हाथ से बनाया गया होगा या ईश्वर ने दैवीय चमत्कार से इन्हें शून्य से प्रकट कर दिया होगा ?

अक्सर हमें यह लगता है कि तकनीक एक सरल रेखा की तरह लगातार ऊपर ही चलती आई है, कल की तकनीक आज से कम उन्नत और आने वाले कल की तकनीक आज से अधिक उन्नत होगी, यह हम मानकर चलते हैं। मगर इन मंदिरों को देखकर इस सोच को थोड़ा-सा झटका जैसा लगता है। लगता है यहाँ वो 2G से 3G, 4G और 5G वाली बात नहीं, बल्कि संदेह होता है कि कहीं हम 20G से वापस 2G आकर दोबारा विकास कर रहे हैं और ये 5G, 6G पर नाज़ हमारी सीमित बुद्धि का ही परिचायक है।

मैंने एक किताब, जिसका नाम है, “लॉर्ड्स ऑफ डेक्कन” में पढ़ा, कैसे एक पहाड़ी को ही काटकर पूरा विशाल मंदिर प्रांगण बना दिया गया और वह भी सैकड़ों वर्ष पहले। यहाँ मैं एलोरा मंदिर की बात कर रहा हूँ। यदि आप इन्हें देखकर इस बारे में विचार करें कि यह कैसे बनाया गया होगा, वो भी आज की हमारी भारी भरकम क्रेनों की मदद के बिना, तो आपको काफी आश्चर्य होगा और साथ ही साथ अपनी विरासत पर गर्व भी होगा कि हमारे पूर्वज इतने उन्नत स्तर का ज्ञान रखते थे।

इस तरह के अनुभवों से हमें शालीनता सीखने को

मिलती है। हम अक्सर अपने कालखंड के संचित ज्ञान, तकनीक इत्यादि पर अति गर्व करने लगते हैं और अपने से पूर्व के समय और संबंधित व्यक्तियों/ज्ञान/तकनीक को खुद से निम्नतर आँक लेते हैं। हमारे प्राचीन मंदिर हमें इस बड़ी गलती से बचाने में मदद करते हैं।

भारत में मंदिरों के आकार, प्रकार, नक्काशी, रूप इत्यादि को देखकर यह स्पष्ट होता है कि भारत के एक बड़े क्षेत्र में एक शैली और दूसरे क्षेत्र में दूसरी शैली के मंदिर देखने को मिलते हैं। इन मंदिर-निर्माण की शैलियों में से दो प्रमुख शैलियाँ या फिर कहे मंदिर वास्तुकला हैं- “नागर वास्तुकला” और “द्रविड़ वास्तुकला”।

उत्तर भारत में हमें नागर वास्तुकला के मंदिर मिलते हैं और दक्षिण भारत में द्रविड़ वास्तुकला। दोनों ही की अपनी-अपनी विशेषताएँ हैं। मंदिरों को हमें सिर्फ देखकर ही मोहित नहीं होना चाहिए बल्कि दो

कदम आगे बढ़कर उनकी बनावट की विशेषताओं, उनके भागों और उन भागों के उद्देश्य इत्यादि के बारे में जानने-समझने का प्रयास भी करना चाहिए। ऐसा प्रयास करने का प्रयोजन क्या है? प्रयोजन यह है कि आप ऐसा करने के बाद उस मंदिर के रचनाकारों, मूर्तिकारों और भावों को बेहतर तरीके से समझ पाएंगे और उन अवयवों की प्रशंसा कर पाएंगे। ऐसा करने से आपका अनुभव और भी प्रभावी और दैवीय होगा। आप प्रशंसा तभी कर पाएंगे जब उसे समझेंगे और समझने के लिए जानना आवश्यक है। यदि आप पहले से जानते हैं तो बहुत अच्छा, यदि नहीं, तो आइए हम देखते हैं कि क्या-क्या अवयव हैं जो सामान्यतः एक शिक्षित व्यक्ति को जानना चाहिए।

वैसे तो हमने पहले ही देख लिया है कि मंदिर वास्तुकला

की दो पद्धतियाँ हैं- नागर और द्रविड़, चूँकि उत्तर भारत (जहाँ का मैं मूल निवासी हूँ) और हमारे राज्य ओडिशा में मुख्य रूप से (न कि शत प्रतिशत) नागर वास्तुकला शैली के मंदिर हैं, अतः मैं इसी शैली के मंदिरों की संरचना के बारे में कुछ मूलभूत विशेषताएँ बताऊंगा।

आइए मंदिर संरचना से संबंधित कुछ शब्दों को जानते हैं जिनके बिना मंदिरों की वास्तुकला को समझना अपूर्ण होगा। ये हैं- गर्भगृह, विग्रह, शिखर, कलश, आमलक, चैत्य, मंडप (जगमोहन), अर्ध मंडप तथा परिक्रमा पथ।



हमारे कार्यालय में कार्यरत लगभग सभी भाग्यशाली कर्मचारियों को अब तक श्री जगन्नाथ मंदिर जाकर जगन्नाथ जी के दर्शन करने का सौभाग्य तो मिला ही होगा तो इन शब्दों की व्याख्या के लिए श्री जगन्नाथ मंदिर से उत्तम और क्या हो सकता है।

जब हम श्री मंदिर के समक्ष सिंह द्वार की तरफ मुँह करके खड़े होते हैं तो सबसे ऊँचाई पर हमें कलश दिखाई देता है (इसी कलश के ऊपर प्रतिदिन ध्वज बदला जाता है)। कलश वह स्थान है जो स्वर्ग के सबसे निकट है। यहीं पर सारी दिव्य शक्तियाँ केंद्रित होकर पूरे मंदिर में फैलती हैं, जिसे हम स्वयं अनुभव कर सकते हैं। यह कलश श्री मंदिर के शिखर पर स्थापित है।

उसके बाद आता है “शिखर”। हिंदू पौराणिक कथाओं में सुमेरु एक पवित्र पर्वत है और सभी मंदिरों के शिखर पर

इसी पवित्र सुमेरू पर्वत को दर्शाया जाता है। यही नहीं, जब हम शिखर को देखते हैं तो आकाश की तरफ अर्थात् ईश्वर की तरफ देखते हैं। इसी शिखर के ठीक नीचे होता है “गर्भ गृह” जो मंदिर का दैवीय और आध्यात्मिक तंत्रिका केंद्र होता है। गर्भ गृह में ही भगवान की मूर्ति की प्रतिष्ठा की जाती है जिसके चलते इस स्थान को मंदिर का सबसे पवित्र और शक्तिशाली स्थान माना जाता है।

गर्भ गृह में “गर्भ” शब्द का महत्व भी हमें जानना चाहिए। किसका गर्भ है यह ? यह है- “ब्रह्माण्ड का गर्भ”

जिससे विश्व का जन्म हुआ है। गर्भ गृह सामान्यतः चौकोर हाता है। इसमें कोई खिड़की नहीं होती और सिर्फ एक मुख्य द्वार होता है जो पूर्व दिशा में खुलता है। गर्भ गृह में अधिक प्रकाश नहीं आता। इसके केंद्र में ही देवता की मूर्ति को रखा जाता है।

आपने देखा होगा कि श्री मंदिर के द्वार से प्रवेश करने के तुरंत बाद

ही गर्भ गृह या श्री जगन्नाथ जी की मूर्ति नहीं दिखती बल्कि कुछ विशाल कक्षनुमा (हॉल जैसा) कमरों से गुज़रने के बाद ही जगन्नाथ जी के दर्शन होते हैं। इन कक्षों को ही मंडप या जगमोहन कहा जाता है। इसी मंडप में “ध्वज स्तंभ” है जो गर्भ गृह के सामने स्थित होता है। मंडप में धार्मिक संगीत और

नृत्य का आयोजन किया जाता था।

अब हम “विग्रह” के बारे में जानते हैं। अक्सर मान लिया जाता है कि विग्रह मूर्ति का ही दूसरा नाम है, परंतु यह सही नहीं है। जब एक मूर्तिकार शिलाओं से मूर्ति बना लेता है तो उसके पास वह मूर्ति मात्र होती है परंतु जब उसी मूर्ति की विधि-विधान से “प्राण-प्रतिष्ठा” कर दी जाती है तब वही मूर्ति “विग्रह” कहलाने लगती है।

इस प्रकार हमने देखा कि एक मंदिर अपने आप में क्या क्या महत्व रखता है, हमें क्या समझाता है और इसका

क्या उद्देश्य होता है मंदिर की संरचना, वास्तुकला इत्यादि के बारे में जानने के पश्चात् आपके मन में मंदिरों के संबंध में और अधिक जानने की उत्सुकता जागृत होगी और आप अपने इस ज्ञान को और लोगों से साझा करके उन्हें भी हमारी धरोहरों की महानता से अवगत करा सकते हैं। अधिक बांटने से ज्ञान और बढ़ता



है यह भी आप सिद्ध कर सकते हैं।

मंदिरों की वास्तुकला के बारे में यह छोटा सा प्रयास आपको रुचिकर और उपयोगी लगा होगा, इसी आशा के साथ मैं अपना यह लेख समाप्त करता हूँ।

-:जय जगन्नाथ:-

माँ सारला मंदिर

श्री रबिन्द्र कुमार दास

सहायक लेखा अधिकारी



ओडिशा एक मंदिर समृद्ध राज्य है। ओडिशा में विभिन्न स्थानों पर विभिन्न भगवान और देवी के हजारों मंदिर स्थित हैं। उनमें से “माँ सारला मंदिर” एक देवी का मंदिर है। इस मंदिर का दूसरा नाम झंकड़ सारला मंदिर (Jhankad Sarala Temple) है। ओडिशा के मध्य में स्थित सारला मंदिर ऐतिहासिक और सांस्कृतिक महत्व का एक प्रसिद्ध स्थल है। सदियों पहले स्थापित यह मंदिर इस क्षेत्र की पूजनीय देवी सरला को समर्पित है। ऐसा माना जाता है कि मंदिर का निर्माण मध्यकाल के दौरान किया गया था, जिसमें उत्कृष्ट वास्तुशिल्प शैलियों का प्रदर्शन किया गया है जो हिंदू और स्वदेशी प्रभावों को मिश्रित करते हैं।

हिंदू संस्कृति में, “माँ सारला” (माँ साराला) एक देवी है जो वैष्णव और शक्ति के अनुयायियों के संरक्षक के रूप में कार्य करती है। एक ही देवता के लिए इन दोनों हिंदू संप्रदायों को फैलाना दुर्लभ है। उनके कभी-कभी बौद्ध तांत्रिक व्यक्ति होने का संदेह होता है, क्योंकि उनके पास एक किताब, वीणा और हेंडबेल है, जो महायान प्रतीक हैं। देवी सारला को ज्ञान की देवी “वाक देवी” और झंकड़ वासिनी शारदा के नाम से भी जाना जाता है।

वर्षों से यह मंदिर आध्यात्मिक गतिविधियों और त्योहारों का केंद्र बना हुआ है, जो हजारों भक्तों और पर्यटकों

को आकर्षित करता है। यहाँ का वार्षिक “सारला यात्रा उत्सव” बड़ी भीड़ को आकर्षित करता है, जहाँ अनुष्ठान और उत्सव मंदिर के सांस्कृतिक महत्व को उजागर करते हैं। इसकी जटिल वास्तुकला, जिसमें सुंदर नक्काशीदार स्तंभ और अलंकृत मूर्तियाँ उस समय से कारीगरों की कुशल कारीगरी को दर्शाती है।

मंदिर के चारों ओर शांत वातावरण, हरी-भरी हरियाली

और शांत जल निकायों के साथ, इसके आकर्षण को बढ़ाते हैं, जिससे यह ध्यान के लिए एक आदर्श स्थान बन जाता है। इसके अतिरिक्त, यह मंदिर विभिन्न सांस्कृतिक घटनाओं के लिए एक केंद्र के रूप में कार्य करता है, जो ओडिशा की समृद्ध परंपराओं और विरासत को बढ़ावा देता है। आज, सारला मंदिर न केवल पूजा स्थल के रूप में खड़ा है, बल्कि ओडिशा की आध्यात्मिक और कलात्मक विरासत की स्थायी घरोहर के प्रमाण के रूप में भी खड़ा है।

झंकड़ देवी सारला का गर्भगृह

है, जिसे अनादि काल से शक्तिवाद की सबसे आध्यात्मिक रूप से उन्नत अभिव्यक्तियों में से एक माना जाता है। दुर्गा और सरस्वती की दिव्य आकृति के संश्लेषण के रूप में माना जाता है, सारला की संस्कृति वैदिक, तांत्रिक और वैष्णव, तीन प्रमुख हिंदू पंथों का समावेशन है। यह ओडिशा के आठ



सबसे प्रसिद्ध शाक्त मंदिरों में से एक है। पत्थर से उकेरी गई मुख्य मूर्ति आठ हथियारों से लैस है जो अपना दाहिना पैर महिषासुर मुद्रा में शेर पर रखती है। 8 वीं शताब्दी में प्रसिद्ध भाउमा राजाओं द्वारा निर्मित इस स्थान का सागेयामदग्नी के गीत ऋषि परशुराम के साथ एक पौराणिक संबंध है। इस प्रकार, इस स्थान का परशुराम पंथ पुराण के केंद्र के रूप में भी ऐतिहासिक महत्व है, जिसमें यह वर्णन किया गया है कि भगवान विष्णु के छोटे अवतार परशुराम ने अपने तीर से देवता को उकेरा और



ज्ञान और शक्ति के लिए उसकी पूजा की। यह ओडिशा के पहले महाकाव्य कवि, 15 वीं शताब्दी ईस्वी के आदिकवि सारला दास के साथ भी जुड़ा हुआ है।

स्थान के लिए आवास सुविधा का लाभ कनकपुर में स्थित कुबेरापुटा धर्मशाला में बुकिंग रूम द्वारा उठाया जा सकता है और मंदिर ट्रस्ट द्वारा प्रबंधित किया जा सकता है। बेहतर आवास सुविधा के लिए पर्यटक जगतसिंहपुर या परेड को पसंद कर सकते हैं, जहां उन्हें बेहतर होटल और लॉज मिल सकते हैं।

चूंकि यह ओडिशा के सबसे पुराने मंदिर में से एक है, इसलिए देश के कई उपासक देवी सरला से आशीर्वाद लेने के लिए वर्ष भर इस स्थान पर आते हैं। जैसे-जैसे इस स्थान पर, यहाँ कई छोटे-छोटे आवास, रेस्तरां और बाजार बनते गए। अब पर्यटक बिना किसी परेशानी के यहाँ शानदार

समय बिताते हैं।

पर्यटक कटक-पारादीप रोड को पसंद कर सकते हैं और उन्हें मंदिर तक पहुंचने के लिए सारला रोड पर जाने की आवश्यकता है। मंदिर सारला रोड से पांच कि.मी. दूर है। पर्यटक आसानी से मंदिर तक पहुंचने के लिए ऑटो रिक्शा और साइकिल रिक्शा ले सकते हैं। मंदिर जिला मुख्यालय जगतसिंहपुर से 18 कि.मी. दूर है, जो बस और ऑटो सेवा द्वारा मंदिर से जुड़ा हुआ है। सारला मंदिर कटक से लगभग 55 कि.मी. दूर है। इसके अलावा, ट्रेन से, पर्यटक कटक रेलवे स्टेशन या भुवनेश्वर रेलवे स्टेशन से यात्रा शुरू कर सकते हैं और सारला रोड स्टेशन पर पहुंच सकते हैं। मंदिर स्टेशन से केवल दो किलोमीटर दूर है। पर्यटक आसानी से भुवनेश्वर या कटक तक पहुंच सकते हैं और फिर लिंक ट्रेन द्वारा गंतव्य तक पहुंच सकते हैं।

जगन्नाथ, पुरी जी के दर्शन

श्री शिवानंद

कनिष्ठ अनुवादक



ओड़िशा स्थित जगन्नाथ, पुरी भारत के चार धामों में से एक है। इसके अलावा तीन और धाम बद्रीनाथ-उत्तराखंड, द्वारकापुरी-गुजरात और रामेश्वरम - तमिलनाडु में स्थित है। हिंदू मान्यताओं के अनुसार इन चारों धामों की यात्रा करना बड़े ही सौभाग्य की बात है और कोई बड़भागी ही होता है जिन्हें चारों धामों के दर्शन संभव होते हैं। बचपन से ही यह बात सुनता आ रहा हूं कि भगवान के दर्शन पाना भगवान की इच्छा पर निर्भर हैं न कि हमारे चाहने पर। इस बात से मैं कुछ हद तक सहमत भी हूं क्योंकि अहमदाबाद, गुजरात में पांच साल से अधिक समय तक सेवा में रहने के बावजूद मैं द्वारकापुरी के दर्शन करने में सफल नहीं हुआ। कई बार

अहमदाबाद से द्वारकापुरी के लिए आरक्षित की गई टिकटों को भी कुछ अपरिहार्य कारणों से रद्द करना पड़ गया और सभी योजनाएं असफल सिद्ध हुईं। अंततः अहमदाबाद से स्थानांतरण के उपरांत जनवरी-2023 में मैंने भुवनेश्वर कार्यालय में कार्यभार ग्रहण किया। घर से भैया जी का आदेश था कि भुवनेश्वर पहुंच कर सबसे पहले जगन्नाथ पुरी जाकर दर्शन करना उसके बाद ही कहीं और घूमने जाना। उनका आदेश मानकर मैं कार्यालय ज्वाइन करने के बाद पहले ही शनिवार को ट्रेन के माध्यम से पुरी पहुंच गया। बड़े ही उत्साह में स्टेशन से मंदिर के लिए गूगल मैप के सहारे पैदल ही मंदिर के लिए निकल दिया। मंदिर पहुंच कर भीड़ देखकर मैं



स्तब्ध रह गया, शायद कुछ विशेष अवसर के कारण बहुत ज्यादा भीड़ थी। इसके पहले मैंने किसी भी मंदिर में इतनी बड़ी मात्रा में श्रद्धालुओं को नहीं देखा था। मैंने अनुमान लगाया कि शायद रात हो जाएगी दर्शन करने में। फिर स्वास्थ्य खराब होने के डर से और यह सोचकर कि अब तो बहुत दिन रहने हैं भुवनेश्वर फिर कभी आ जाएंगे, मैंने मंदिर के बाहर से ही प्रार्थना करना उचित समझा। फिर मैंने बाहर से ही भगवान का स्मरण कर अपनी पूजा अर्चना की और फिर दुबारा आने का प्रण लेकर वापस भुवनेश्वर चला आया।

इसके बाद फरवरी-2024 में भी कुछ कार्य से शाखा कार्यालय पुरी जाना हुआ परंतु तब भी पुरी मंदिर जाने का समय नहीं मिला। अंततः

मुझे दुबारा जगन्नाथ मंदिर जाने में 2 वर्ष लग गए और जनवरी 2025 में मुझे जगन्नाथ मंदिर के संपूर्ण दर्शन का अवसर प्राप्त हुआ। यह मेरे लिए बड़े ही सौभाग्य की बात थी।

भारत के पूर्वी तट पर स्थित इस मंदिर का निर्माण कलिंग वास्तु शैली में बारहवीं शताब्दी में कलिंग राजा अनंतवर्मन चोडगंग देव द्वारा कराया गया था जिसका जीर्णोद्धार 1174 ई. में ओड़िया शासक अनंग भीम देव द्वारा कराया गया था। मंदिर के गर्भगृह में भगवान जगन्नाथ, बड़े भाई बलभद्र और बहन सुभद्रा विराजमान हैं। वर्ष में एक बार यहां पर रथ यात्रा का आयोजन किया जाता है जिसे आषाढ़ शुक्ल पक्ष की द्वितीया को आयोजित किया जाता है। इस उत्सव में भगवान जगन्नाथ, बड़े भाई बलभद्र और बहन सुभद्रा अति भव्य और विशाल रथों में सुसज्जित होकर यात्रा पर निकलते हैं। यह यात्रा 5 किलोमीटर लम्बी होती है, जिसमें लाखों की संख्या में लोग एकत्र होते हैं।

भगवान के दर्शन के बाद मैं पैदल ही पुरी तट पर पहुंचा। मंदिर से पुरी तट की दूरी एक किलोमीटर के आस-पास ही है। पुरी तट को देखकर मन अनायास विशाल सागर की ओर नतमस्तक हो जाता है। समुद्र तट पर एक अलग ही दिव्यता का आभास होता है और साथ ही आभास होता है प्रकृति की व्यापकता, नित्यता, शाश्वत गतिशीलता और



परिवर्तनशीलता का और साथ ही स्वयं की क्षुद्रता, नश्वरता और जड़ता का जो स्वयं को ही स्वयंभू मानने की कुचेष्टा करता है। पुरी मंदिर दर्शन के साथ-साथ पुरी तट पर स्नान का भी विशेष महत्त्व है। पुरी तट पर स्नान और ध्यान करना भी एक अलग अनुभव था। पुरी तट पर लगातार हल्की हल्की लहरें उठती रहती हैं ऐसा लगता है कि लहरों में भगवान जगन्नाथ जी की स्तुति में मंत्रोच्चारण का अनवतरत नाद सुनाई दे रहा है। इसके पहले मैंने मुंबई, गोवा और सूरत के समुद्र तटों को देखा है परंतु जिस दिव्यता, जिस शांति की अनुभूति पुरी तट पर होती है वह और कहीं महसूस न हुई। मन करता है बस बैठ के इन लहरों को देखते ही रहें और उनकी ध्वनि के साथ-साथ स्वयं की अंतर्ध्वनि को भी सुनने और समझने का प्रयत्न करें।

जगन्नाथ पुरी भारत के प्रसिद्ध तीर्थ स्थलों में से एक है। सभी को कम से कम एक बार पुरी दर्शन के लिए अवश्य आना चाहिए।

गुंडीचा मंदिर: आस्था का पवित्र केंद्र



श्री अजय कुमार साव

कनिष्ठ अनुवादक

भारत, अपनी समृद्ध धार्मिक और सांस्कृतिक विरासत के लिए प्रसिद्ध है। यहाँ के मंदिर केवल पूजा स्थल ही नहीं, बल्कि इतिहास, कला और परंपराओं के प्रतीक भी हैं। ओडिशा के पुरी में स्थित “गुंडीचा मंदिर” एक ऐसा ही महत्वपूर्ण धार्मिक स्थल है, जो भगवान जगन्नाथ, बलभद्र और सुभद्रा के वार्षिक रथयात्रा महोत्सव से जुड़ा हुआ है और इसे “गुंडीचा घर” या “मौसी माँ का घर” के नाम से भी जाना जाता है। यह मंदिर न केवल धार्मिक दृष्टि से महत्वपूर्ण है, बल्कि इसकी ऐतिहासिक और सांस्कृतिक महत्ता भी अद्वितीय है।

गुंडीचा मंदिर पुरी के मुख्य जगन्नाथ मंदिर से लगभग 3 किलोमीटर की दूरी पर स्थित है। यह मंदिर ओडिशा की पारंपरिक कलिंग स्थापत्य शैली में निर्मित है। यह स्थान विशेष रूप से रथयात्रा महोत्सव के दौरान अत्यधिक महत्व रखता है, क्योंकि भगवान जगन्नाथ, बलभद्र और सुभद्रा अपने रथों पर सवार होकर मुख्य मंदिर से गुंडीचा मंदिर तक जाते हैं और यहाँ सात दिनों तक विश्राम करते हैं। गुंडीचा मंदिर को “गुंडीचा घर” भी कहा जाता है। इसकी विशेषता यह है कि यह वर्षभर ज्यादातर खाली रहता है और केवल रथयात्रा के दौरान ही सक्रिय रूप से पूजा-अर्चना के लिए उपयोग में लाया जाता है।

गुंडीचा मंदिर का निर्माण गंग वंश के राजाओं द्वारा 12 वीं शताब्दी

में करवाया गया था। यह मंदिर रानी गुंडीचा देवी की स्मृति में बनाया गया था और इस मंदिर की पवित्रता तथा महत्व भगवान जगन्नाथ के साथ रानी गुंडीचा देवी के विशेष संबंध के कारण ही स्थापित हुआ। गुंडीचा देवी की भगवान जगन्नाथ के प्रति भक्ति एक अद्भुत और प्रेरणादायक कथा है, जो इस बात को दर्शाती है कि सच्चे प्रेम और श्रद्धा से भगवान को प्राप्त किया जा सकता है।

गुंडीचा देवी पुरी के प्रसिद्ध राजा इंद्रद्युम्न की पत्नी थीं। राजा इंद्रद्युम्न वही राजा थे, जिन्होंने पुरी में श्री जगन्नाथ मंदिर का निर्माण कराया था। गुंडीचा देवी को भगवान विष्णु और विशेष रूप से भगवान जगन्नाथ का अनन्य भक्त माना जाता था। वे अत्यंत सरल, दयालु और धर्मपरायण थीं।



गुंडीचा देवी ने अपने जीवन का अधिकांश समय भगवान जगन्नाथ की भक्ति, ध्यान और सेवा में व्यतीत किया। वे न केवल स्वयं भगवान की उपासना करती थीं, बल्कि अपने राज्य में भी भक्तिभाव को बढ़ावा देती थीं। उनकी भक्ति इतनी प्रबल थी कि स्वयं भगवान जगन्नाथ ने उन्हें एक विशेष स्थान प्रदान किया।

कहा जाता है कि एक बार गुंडीचा देवी ने भगवान जगन्नाथ से प्रार्थना की कि वे केवल एक बार के लिए उनके निवास स्थान (गुंडीचा मंदिर) में पधारे और वहाँ कुछ समय व्यतीत करें। भगवान उनकी भक्ति से अत्यंत प्रसन्न हुए और उन्होंने वरदान दिया कि वे केवल एक बार के लिए ही नहीं बल्कि हर वर्ष कुछ दिनों के लिए उनके मंदिर में निवास करेंगे। यही परंपरा आगे चलकर पुरी की रथयात्रा के रूप में प्रसिद्ध हुई।

हर साल आषाढ़ माह में आयोजित होने वाली इस यात्रा के दौरान भगवान जगन्नाथ, बलभद्र और सुभद्रा को उनके मुख्य मंदिर से गुंडीचा मंदिर लाया जाता है। यह यात्रा नौ दिनों तक चलती है और इसे “गुंडीचा यात्रा” के नाम से जाना जाता है। यह यात्रा बहुत ही धूमधाम और उत्साह के साथ मनाई जाती है। लाखों भक्त इस यात्रा में शामिल होते हैं और भगवान जगन्नाथ के दर्शन करते हैं। जब भगवान जगन्नाथ, बलभद्र और सुभद्रा अपने विशाल रथों पर सवार होकर मुख्य मंदिर से गुंडीचा मंदिर जाते हैं, तो इसे उनकी “मौसी के घर यात्रा” भी कहा जाता है। गुंडीचा देवी को भगवान की मौसी भी कहा

जाता है, क्योंकि भगवान उनके प्रति अपार प्रेम और श्रद्धा रखते थे। यह भी कहा जाता है कि भगवान जगन्नाथ जब गुंडीचा मंदिर में सात दिनों तक रहते हैं, तो वे वहाँ विशेष रूप से शुद्ध और सात्विक भोजन ग्रहण करते हैं, जिसे “पोडा पिठा” (ओडिशा की एक पारंपरिक मिठाई) कहा जाता है। यह भोजन गुंडीचा देवी की सेवा और स्नेह का प्रतीक माना जाता है।



रथयात्रा के दौरान भगवान जगन्नाथ का गुंडीचा मंदिर में प्रवेश करना एक बहुत ही पवित्र और आनंदमय अनुभव है। इस दौरान मंदिर में विभिन्न धार्मिक अनुष्ठान और पूजा-अर्चना की जाती है। भक्तों का मानना है कि इस दौरान भगवान जगन्नाथ अपने भक्तों के बीच आते हैं और उनकी सभी मनोकामनाएं पूरी करते हैं। गुंडीचा मंदिर में भगवान जगन्नाथ का ठहरना एक पारिवारिक मिलन की तरह होता है, जहाँ वे अपनी मौसी के घर में आराम करते हैं।

गुंडीचा मंदिर न केवल धार्मिक दृष्टि से महत्वपूर्ण है, बल्कि इसका सांस्कृतिक महत्व भी अत्यधिक है। यह मंदिर ओडिशा की संस्कृति और परंपराओं को दर्शाता है। रथयात्रा के दौरान यहाँ आयोजित होने वाले विभिन्न कार्यक्रम और अनुष्ठान ओडिशा की समृद्ध सांस्कृतिक विरासत को दर्शाते हैं। मंदिर के आसपास का क्षेत्र भी बहुत ही सुंदर और शांत है जिससे यहाँ आने वाले भक्तों को एक अलग ही प्रकार की शांति और आनंद की अनुभूति होती है। मंदिर के प्रांगण में बैठकर भक्त भगवान जगन्नाथ की भक्ति में लीन हो जाते हैं।

यदि हम गुंडीचा मंदिर की वास्तुकला पर गौर करें तो यह ओडिशा के प्राचीन मंदिरों की शैली को दर्शाती है। मंदिर का निर्माण पत्थरों से किया गया है और इसकी संरचना में कलिंग शैली की विशेषताएं स्पष्ट रूप से देखी जा सकती हैं। यह मंदिर चार प्रमुख भागों में विभाजित है।

1. विमान (मुख्य गर्भगृह)
2. जगमोहन (सभा मंडप)
3. नाट्य मंडप (नृत्य हॉल)
4. भोग मंडप (प्रसाद ग्रहण करने का स्थान)

मंदिर के गर्भगृह में भगवान जगन्नाथ, बलभद्र और सुभद्रा की मूर्तियाँ स्थापित हैं तथा इसके चारों ओर एक बड़ा प्रांगण है, जहाँ भक्तों की भीड़ एकत्रित होती है। मंदिर के शिखर पर एक कलश स्थापित है, जो इसकी वास्तुकला की शोभा बढ़ाता है। मंदिर का परिसर एक ऊँची दीवार से घिरा हुआ है, जिसे “मेघनाद प्राचीर” कहा जाता है। इस मंदिर

का मुख्य द्वार पश्चिम दिशा में स्थित है, जिसे “सिंह द्वार” कहा जाता है। इसके अलावा, यहाँ एक और द्वार पूर्व दिशा में स्थित है, जिसे “नकुलाना द्वार” कहा जाता है। मंदिर में सादगी का प्रभाव अधिक देखने को मिलता है। यह पूरी तरह से लाल बलुआ पत्थर से निर्मित है और इसकी दीवारों पर विभिन्न धार्मिक चित्र और मूर्तियाँ उकेरी गई हैं, जो भगवान जगन्नाथ और उनके भाई-बहन की कथाओं को दर्शाती हैं। इसकी वास्तुकला पुरी के मुख्य जगन्नाथ मंदिर से मिलती-जुलती है, लेकिन यहाँ की शिल्पकला अधिक सरल और सौम्य है। मंदिर का वातावरण शांत और आध्यात्मिक है, जो भक्तों को एक अलग ही दुनिया में ले जाता है।

गुंडीचा मंदिर ओडिशा के सबसे पवित्र स्थलों में से एक है। यह केवल एक मंदिर नहीं, बल्कि भक्ति, परंपरा और संस्कृति का प्रतीक है। इसका सबसे बड़ा महत्व रथयात्रा महोत्सव से जुड़ा हुआ है, जब भगवान जगन्नाथ यहाँ पधारते हैं और लाखों भक्तगण उनके दर्शन के लिए उमड़ पड़ते हैं। इस मंदिर की सरलता, पवित्रता और ऐतिहासिक महत्व इसे अन्य धार्मिक स्थलों से अलग बनाते हैं। जो भी भक्त यहाँ श्रद्धा और विश्वास के साथ आते हैं, उन्हें अपार आध्यात्मिक शांति और भगवान का आशीर्वाद प्राप्त होता है। गुंडीचा मंदिर न केवल ओडिशा बल्कि सम्पूर्ण भारत की धार्मिक और सांस्कृतिक विरासत का एक अनमोल रत्न है, जिसे पीढ़ी दर पीढ़ी संजोकर रखना आवश्यक है।



राष्ट्रीय व्यवहार में हिंदी को काम में लाना देश की एकता और उन्नति के लिए आवश्यक है।

-महात्मा गांधी

ओडिशा का मन : मंदिर

श्री अभिषेक कुमार

सहायक लेखा अधिकारी



मंदिरों का शहर भुवनेश्वर, अतुल्य ओडिशा की राजधानी है और पिछले 12 वर्षों से मेरी कर्मभूमि भी। भुवनेश्वर, खुर्दा जिला के अंतर्गत एक शहर है जिसकी हर गली में एक या एक से अधिक मंदिर स्थापित है। मंदिर शब्द का शाब्दिक अर्थ होता है- “मन का द्वार”। मंदिर का अर्थ घर भी होता है लेकिन यह घर ईश्वर का है। मंदिर अपने आप में स्वच्छता, पवित्रता का प्रतीक है। एक ऐसा स्वच्छतम स्थान जहाँ परम सुंदर भगवान वास करते हैं।

जब व्यक्ति मंदिर में एक प्रार्थी बनकर प्रवेश करता है तब मानव मन के षड् विकार मंदिर के बाहर ही छूट जाते हैं। काम, क्रोध, लोभ, मोह, मत्सर, ईर्ष्या आदि मंदिर के द्वार लांघ नहीं सकते, अगर व्यक्ति एक प्रार्थी बनकर प्रार्थना के उद्देश्य से मंदिर जाता है। प्राचीन

काल से ही ओडिशा मंदिरों की भूमि रही है। इस भूमि पर अनेक दिव्यदर्शी सम्राट तथा नागरिकों ने अनेक कालजयी मंदिरों का निर्माण करवाया है, जो आज भी सनातन संस्कृति का ध्वज फहराते हैं, जो अटूट आस्था, विश्वास, प्रेम, समर्पण, साधना, योग के केंद्र हैं।

ओडिशा के विभिन्न कालजयी मंदिर किसी परिचय के मोहताज नहीं हैं। विधर्मी आक्रांताओं के आक्रमण से रक्षित आज भी सांस्कृतिक, आध्यात्मिक, सामाजिक तथा आर्थिक चारों स्तंभों के ऊपर मंडित हो रहा है। मंदिर और मंदिर के

बाहर वाली दुनिया में यह फर्क है कि मंदिर के बाहर की दुनिया में सब आपसे कुछ-न-कुछ अपेक्षा रखते हैं या मांगते हैं, परंतु मंदिर में आप जो चाहे मांगते हैं जिसकी कोई ऊपरी सीमा नहीं है। मंदिर केवल मांगने का स्थान ही नहीं बल्कि बिना मांगे भी बहुत कुछ देने वाला स्थान है, जैसे- शांति, स्वास्थ्य, एकता, साहचर्य, सद्गति तथा सद्गुण आदि।

मैं ओडिशा के

सभी मंदिरों के बारे में व्याख्या तो नहीं कर सकता हूँ क्योंकि इन महान मंदिरों का यश दोपहर के सूर्य के समान देदीप्यमान है और मेरा ज्ञान एक दीया। फिर भी मैं अपने न्यू ए.जी. कॉलोनी के सर्वेश्वर महादेव मंदिर, राधा कृष्ण मंदिर तथा ओल्ड ए.जी. कॉलोनी के लक्ष्मी नारायण

मंदिर से शुरुआत करता हूँ। हमारे कॉलोनी से ऑफिस आने के रास्ते में कुल नौ मंदिर हैं।

हमारे कॉलोनी में सर्वेश्वर महादेव मंदिर, श्री राधा कृष्ण मंदिर तथा श्री हनुमान जी का मंदिर है। मंदिर का वातावरण सुरम्य और सकारात्मक ऊर्जा से ओत-प्रोत है। मंदिर का वास्तु सामान्य है परंतु प्राण प्रतिष्ठित मूर्तियाँ मंदिर को प्राण ऊर्जा से भरपूर बनाती हैं। साल भर विभिन्न त्योहारों/पर्वों/व्रतों के अवसर पर श्रद्धालु गण अपने-अपने इष्ट के चरणों में प्रणाम एवं श्रद्धासुमन अर्पित करने मंदिर पहुँचते हैं



तथा मन की शांति तथा आध्यात्मिक सुरक्षा प्राप्त करते हैं। मैंने देखा है कि मासिक संक्रांति के अवसर पर लोग ब्रह्म मूहूर्त में ही उठकर स्नान, नित्यकर्म आदि करके मंदिर में पूजा अर्चना करते हैं। वर्ष में 12 संक्रांति पड़ती है, अर्थात् ये 12 दिन सुबह उठना, स्नान करना, मंदिर तक चलकर जाना, घंटा बजाना, फूलों का स्पर्श, घी के दीपक जलाना, धूप जलाना आदि स्वास्थ्य को बढ़ाने वाले कार्य हैं। किसी भी मंदिर की वास्तु का प्रमुख भाग औषधीय गुण वाले वनस्पति भी होते हैं। जैसे- तुलसी, बेल, पीपल, बरगद, केला, आँवला, नीम तथा सुगंधित फूल के पेड़ आदि। इन पेड़-पौधों के अनगिनत फायदे किसे नहीं पता ?

सनातन संस्कृति और मंदिरों के दृष्टिकोण से कार्तिक मास और ऋतुसंधि कालों में मंदिरों/घरों में विशेष स्नान/दान/पूजा/अर्चना/कीर्तन आदि का विशेष महत्त्व है। उल्लेखनीय है कि मंदिर जाते समय हम खुद को स्वच्छ करते हैं तथा ईश्वर का अभिवादन करते हैं। हमारे शास्त्रों में भी कहा गया है कि-

“अभिवादनशीलस्य नित्यं वृद्धोपसेविनः।

चत्वारि तस्य वर्धन्ते आयुर्विद्या यशोबलं।।”

मंदिर एक ऐसा स्थान है जहाँ से “सर्वे भवन्तु सुखिनः सर्वे सन्तु निरामयाः। सर्वे भद्राणि पश्यन्तु मा कश्चिद् दुःख भागभवेत्।” जैसे विश्व कल्याण के स्वर सुनाई देते हैं।

हमारे कॉलोनी के मंदिर में कार्तिक मास के अंतिम पाँच दिन एकादशी से पूर्णिमा तक श्रद्धालु गण ब्रह्म मूहूर्त में ही उठकर मंदिर में एकत्र हो पूजा-अर्चना करते हैं तथा कीर्तन करते हुए प्रभात फेरी भी निकालते हैं। कीर्तन के दौरान करतल ध्वनि, ढोल, मजीरा, शंख आदि की ध्वनियाँ करते हैं, जिसका शारीरिक स्वास्थ्य पर बहुत ही अच्छा प्रभाव पड़ता है। केवल सुबह में उठने मात्र से ही हमारा स्वास्थ्य बढ़िया रहता है। मंदिर में जाने से पहले हम स्नान करते हैं जिससे शरीर का ताप घटता है और ऊर्जा का संचार

होता है, वहीं मंदिर से लौटते हुए हम दान करते हैं जिससे दूसरों का दरिद्रता रूपी ताप कम हो जाता है। लगभग सभी मंदिरों में पंच महाभूतों का विशेष तारतम्य देखने को मिलता है, जैसे - दीप में अग्नि, कुएँ में जल, स्वच्छ हवा, सुंदर साफ जमीन और विस्तृत और निर्मल आकाश। कुछ जिज्ञासु कहते हैं कि ईश्वर तो सर्वत्र है तो फिर मंदिर जाने की क्या आवश्यकता है ? तो उत्तर यह है कि मंदिर मात्र भौतिक ढांचा नहीं अपितु एक अवस्था है जो ईश्वर प्राप्ति के लिए अनिवार्य है, एक साधन है, एक झरोखा है जहाँ से ईश्वर के दर्शन होते हैं। अब बात करते हैं ओडिशा के कुछ कालजयी मंदिरों के बारे में:-

1. श्री जगन्नाथ मंदिर:- ओडिशा के पुरी में स्थित सबसे प्रसिद्ध और लोकप्रिय मंदिर श्री जगन्नाथ मंदिर है तथा भारत के सबसे पवित्र तीर्थ स्थलों में से एक है। यह मंदिर भगवान जगन्नाथ, बलभद्र तथा सुभद्रा को समर्पित है। यह चार धामों में से एक धाम भी है। यहाँ प्रति वर्ष प्रसिद्ध रथ यात्रा निकाली जाती है जिसमें जन समुद्र उभरता है और श्रद्धा-भक्ति अपने चरम पर होती है। वास्तुकला के दृष्टिकोण से भी यह मंदिर अप्रतिम है। इस मंदिर की रसोई भी बहुत प्रसिद्ध है जहाँ प्रतिदिन हजारों भक्त भगवान का प्रसाद ग्रहण करते हैं। यहाँ विश्व की सबसे प्रसिद्ध रसोई है। यहाँ का प्रसाद मिट्टी के बर्तनों में बहुत ही सात्विक भोग से बनाया जाता है। इस मंदिर की छाया नहीं बनती तथा इसका ध्वज हमेशा हवा के विपरीत दिशा में बहता है।

2. माँ तारा तारिणी मंदिर:- यह मंदिर शक्तिपीठों में से एक है तथा ऋषिकुल्या नदी के तट पर स्थित है। चैत्र मेला इस मंदिर का सबसे महत्वपूर्ण कार्यक्रम है। यह मंदिर शक्ति उपासकों के लिए एक महत्वपूर्ण साधना स्थल है। यह मंदिर मनोकामना पूर्ण करने वाली मानी जाती है।

3. कोणार्क सूर्य मंदिर:- इस मंदिर का निर्माण 13वीं शताब्दी में किया गया था। यह अपनी अद्भुत वैज्ञानिक

वास्तुकला के लिए विश्व प्रसिद्ध है और एक वैश्विक धरोहर भी है। इसे भगवान सूर्य के रथ के आकार में बनाया गया है। कोणार्क सूर्य मंदिर ओडिशा के गौरवशाली इतिहास का जीवंत उदाहरण है तथा वास्तुकला का एक अप्रतिम उदाहरण भी। इस मंदिर के पहियों पर पड़ने वाली सूर्य की किरणों से सटीक समय की गणना की जा सकती है।

4.लिंगराज मंदिर:- भुवनेश्वर में स्थित यह मंदिर भगवान शिव को समर्पित है। यह ओडिशा के सबसे प्रमुख मंदिरों में से एक है। इसका निर्माण 8वीं शताब्दी में हुआ था।

5. मुक्तेश्वर मंदिर:- इस मंदिर का निर्माण 950 ई. में हुआ था। यह भगवान शिव को समर्पित है तथा भुवनेश्वर में स्थित है। यह मंदिर “वास्तुकला के रत्न के” रूप में प्रसिद्ध है।

6.राजा रानी मंदिर:- 11वीं शताब्दी में बनाया गया यह मंदिर प्रेम मंदिर के नाम से प्रसिद्ध है। यह मंदिर भी भुवनेश्वर में स्थित है।

7.अनंत वासुदेव मंदिर:- यह मंदिर भगवान विष्णु को समर्पित है तथा भुवनेश्वर के गौरवशाली इतिहास का प्रतीक भी है। यहाँ भी पुरी के जगन्नाथ मंदिर की तरह रसोई है जहाँ हजारों भक्त प्रसाद ग्रहण करते हैं।

8.चौसठ योगिनी मंदिर:- यह मंदिर भुवनेश्वर से करीब 20 कि.मी. की दूरी पर हीरापुट नामक गाँव में स्थित है। यह मंदिर देवी दुर्गा को समर्पित है।

ओडिशा के अन्य प्रमुख मंदिरों में नीलमाधव मंदिर, ब्रह्मेश्वर मंदिर, गुंडीचा मंदिर, परशुरामेश्वरम मंदिर, बैताल देउला मंदिर, राम मंदिर भुवनेश्वर, चंडी मंदिर (कटक) काफी प्रसिद्ध है।

आप जो करते हैं और जो बनाते हैं, वही आपके व्यक्तित्व की परिभाषा होती है। ओडिशा के लोगों के व्यक्तित्व की परिभाषा मंदिर है और ओडिशा का मन भी मंदिर हैं।

ओडिशा में जगह-जगह मंदिर हैं। यह आम बात नहीं है, यही तो यहाँ की खास बात है।

पौराणिक मान्यताओं एवं वैज्ञानिक कसौटी के आधार पर यह सिद्ध होता है कि विभिन्न मंदिरों के गर्भ-गृह की रचनाएं भी विशेष ऊर्जा से प्राण-प्रतिष्ठित होती हैं और इसका



मानव के तन-मन पर बहुत ही सकारात्मक प्रभाव पड़ता है। इसीलिए तो हमारे शास्त्रों में मंदिर को मुक्ति का द्वार कहा गया है। मंदिर एक आम इंसान को उस परम अवस्था से जोड़ने का माध्यम है, जिसे हम भगवान या देव कहते हैं। कभी किसी मंदिर से किसी के अहित के लिए आवाज नहीं दी गई है। मंदिर स्व के सिद्धांत पर नहीं बल्कि “सर्व” के दर्शन पर आधारित है जहाँ प्रकृति के हर जीव को स्वीकृति है।

उत्कल की पावन भूमि इन्हीं छोटे-बड़े मंदिरों की भूमि है। यहाँ के युग पुरुषों के द्वारा स्थापित अद्भुत स्थापत्य कला आज भी लाखों जनमानस को अपेक्षित धर्म, अर्थ, काम तथा मोक्ष प्रदान करने वाली है। आशा है कि मंदिरों की यह भूमि हमेशा ही कलिकाल के दुष्प्रभावों से बची रहे और भारत ही नहीं अपितु समूचे विश्व को एकाग्र शांति का संदेश देती रहे। मंदिरों के ध्वज पर सनातन का सूर्य सदा देदीप्यमान रहे।

इस्कॉन मंदिर: भुवनेश्वर

सुश्री सुनीता देवी

कनिष्ठ अनुवादक



भारत का एक पूर्वी राज्य ओडिशा जिसे मंदिरों की नगरी भी कहा जाता है। यहां स्थित मंदिर भारत में ही नहीं वरन् पूरे विश्व में एक अनुपम स्थान रखते हैं। यहां का प्रत्येक मंदिर अपने आप में एक अनूठी आध्यात्मिक एवं सांस्कृतिक विरासत को समेटे हुए है, चाहे वह पुरी का जगन्नाथ मंदिर हो या फिर कोणार्क का सूर्य मंदिर या भुवनेश्वर का लिंगराज मंदिर या कोई अन्य मंदिर। इन्हीं मंदिरों में एक बेहद भव्य और दिव्य मंदिर है—भुवनेश्वर का इस्कॉन मंदिर। यूँ तो यहां स्थित प्रत्येक मंदिर अपनी अद्भुत स्थापत्य कला, आध्यात्मिक तथा सांस्कृतिक विरासत के लिए प्रसिद्ध है परन्तु भुवनेश्वर स्थित इस्कॉन मंदिर का अपना अलग ही महत्व है, जिसके विषय में हम इस लेख में चर्चा करेंगे।

इस्कॉन मंदिर ओडिशा की राजधानी भुवनेश्वर में स्थित एक प्रसिद्ध हिंदू मंदिर है। यह मंदिर अंतर्राष्ट्रीय कृष्ण भावनामृत संघ (International Society For Krishna Consciousness, ISKCON) के तहत संचालित होता है जो भगवान श्री कृष्ण की भक्ति और उनके दर्शन को समर्पित एक वैश्विक संगठन है। इस्कॉन संस्था की स्थापना 1966 में स्वामी प्रभुपाद (अभय चरणारविंद भक्तिवेदांत स्वामी प्रभुपाद) ने न्यूयॉर्क में की थी। पूरे विश्व में इस्कॉन मंदिरों

का निर्माण भगवान श्री कृष्ण और उनके अवतारों की पूजा-अर्चना के लिए किया गया है। ये मंदिर न केवल धार्मिक गतिविधियों का केंद्र हैं, बल्कि आध्यात्मिक ज्ञान, संस्कृति और समाज सेवा का भी प्रतीक हैं। इस्कॉन मंदिर की स्थापना का उद्देश्य लोगों को भगवान श्री कृष्ण की शिक्षाओं और भक्ति योग के माध्यम से आध्यात्मिक ज्ञान प्रदान करना है।



इस्कॉन मंदिर, भुवनेश्वर की स्थापना 1991 में हुई थी। यह स्वामी प्रभुपाद द्वारा बनवाया गया 108वां इस्कान मंदिर है। उन्होंने भगवान कृष्ण की शिक्षाओं को पूरे विश्व में फैलाने का संकल्प लिया था। भुवनेश्वर में इस्कॉन मंदिर की स्थापना इसी मिशन का हिस्सा थी। यह मंदिर इस्कॉन के प्रमुख मंदिरों में से एक है और इसे भुवनेश्वर के प्रमुख धार्मिक

स्थलों में गिना जाता है।

अब बात यदि इस मंदिर की वास्तुकला की करें तो यह अत्यंत अद्भुत और आकर्षक है। मंदिर का निर्माण पारंपरिक और आधुनिक वास्तुशिल्प दोनों शैलियों के मिश्रण से किया गया है। मंदिर का गुम्बद और शिखर सुनहरे रंग से सजाया गया है, जो इसकी भव्यता में चार चांद लगाता है। मंदिर के अंदर की दीवारों पर भगवान श्री कृष्ण और उनकी

विभिन्न लीलाओं के चित्र बने हुए हैं। मंदिर के मुख्य गर्भगृह में भगवान कृष्ण, राधा रानी और बलराम की मूर्तियां स्थापित हैं। इसके साथ ही इस मंदिर में प्रभु जगन्नाथ सहित अन्य देवी-देवताओं की मूर्तियां भी विद्यमान हैं। ये मूर्तियां अत्यंत सुंदर और दिव्य हैं, जो भक्तों के मन को शांति और आनंद से भर देती हैं। मंदिर के अंदर की दीवारों पर भगवान श्री कृष्ण के जीवन से जुड़े दृश्यों को चित्रित किया गया है। इन चित्रों के माध्यम से भक्तों को कृष्ण की बाल-लीलाओं, महाभारत और अन्य पौराणिक कथाओं के बारे में जानकारी मिलती है। मंदिर के प्रवेश द्वार पर एक विशाल ध्वज स्तंभ है, जो इस्कॉन मंदिर की पहचान है।

इस्कॉन मंदिर, भुवनेश्वर में प्रतिदिन विभिन्न धार्मिक और आध्यात्मिक गतिविधियाँ आयोजित की जाती हैं। यहाँ प्रतिदिन सुबह और शाम को आरती होती है, जिसमें बड़ी संख्या में श्रद्धालु एकत्र होकर भगवद् भजन में लीन हो जाते हैं। मंदिर में भगवद् गीता और श्रीमद् भागवत के प्रवचन भी आयोजित किए जाते हैं। मंदिर में प्रत्येक रविवार को विशेष कार्यक्रमों का आयोजन किया जाता है। इन कार्यक्रमों में भक्तों को भगवान कृष्ण के जीवन और उनके दर्शन के बारे में जानकारी दी जाती है। इसके अलावा, मंदिर में हर महीने एक विशेष उत्सव मनाया जाता है, जिसमें भक्तों को प्रसाद वितरित किया जाता है। इस्कॉन मंदिर में भक्ति योग की शिक्षा भी दी जाती है, जिसमें लोगों को भगवान कृष्ण की भक्ति और ध्यान के माध्यम से आंतरिक शांति प्राप्त करने का मार्ग बताया जाता है। मंदिर में प्रतिवर्ष जन्माष्टमी का त्योहार बड़े ही धूमधाम से मनाया जाता है। इस दिन मंदिर को फूलों और रंग-बिरंगी रोशनी से सजाया जाता है और भगवान कृष्ण की झांकी निकाली जाती है। राधाष्टमी के दिन मंदिर में राधा रानी की पूजा की जाती है। इस दिन मंदिर के पुजारी विशेष पूजा-अर्चना करते हैं। इस अवसर पर हजारों भक्त मंदिर में एकत्रित होते हैं और भगवान श्री कृष्ण की आराधना करते हैं।

इसके अलावा होली, दीपावली और रथ यात्रा जैसे त्योहार भी यहाँ बड़े उत्साह के साथ मनाए जाते हैं।

इस्कॉन मंदिर, भुवनेश्वर धार्मिक और आध्यात्मिक दृष्टि से अत्यंत महत्वपूर्ण है। यह मंदिर न केवल भक्तों के लिए एक पूजा स्थल है, बल्कि यह एक ऐसा स्थान है जहाँ लोग अपने मन की शांति और आत्मीय सुख की तलाश में आते हैं। मंदिर में भगवान कृष्ण की भक्ति और उनकी शिक्षाओं के माध्यम से लोगों को जीवन के सही मार्ग पर चलने की प्रेरणा मिलती है। मंदिर में नियमित रूप से आध्यात्मिक कक्षाएं आयोजित की जाती हैं। इन कक्षाओं में भक्तों को जीवन के मूल्यों, नैतिकता और आध्यात्मिकता के बारे में सिखाया जाता है। इस मंदिर में युवाओं के लिए विशेष प्रशिक्षण कार्यक्रम भी आयोजित किए जाते हैं। इन कार्यक्रमों के माध्यम से युवाओं को भगवान श्री कृष्ण के संदेश को समझने और उसे जीवन में आत्मसात् करने का अवसर मिलता है। इसके अलावा, मंदिर में ध्यान और योग की कक्षाएं भी आयोजित की जाती हैं, जो मानसिक और शारीरिक स्वास्थ्य के लिए लाभदायक है।

धार्मिक महत्व के साथ इस्कॉन मंदिर का सामाजिक महत्व भी कुछ कम नहीं है। यह मंदिर समाज के विभिन्न वर्गों के लोगों को एक साथ लाता है और उन्हें भक्ति और प्रेम के मार्ग पर चलने के लिए प्रेरित करता है। मंदिर में आयोजित विभिन्न कार्यक्रमों और प्रवचनों के माध्यम से लोगों को नैतिक और आध्यात्मिक मूल्यों की शिक्षा दी जाती है। यह मंदिर धार्मिक और आध्यात्मिक गतिविधियों के साथ-साथ समाज सेवा और कल्याण कार्यों में भी सक्रिय है। मंदिर के अंतर्गत कई सामाजिक कार्यक्रम चलाए जाते हैं, जिनमें गरीबों और जरूरतमंदों को भोजन वितरित करना, शिक्षा प्रदान करना और चिकित्सा सुविधाएं उपलब्ध कराना शामिल है। मंदिर के “फूड फॉर लाइफ” कार्यक्रम के तहत प्रतिदिन हजारों लोगों को मुफ्त भोजन वितरित किया जाता है। इस

कार्यक्रम का उद्देश्य भूखे लोगों को भोजन उपलब्ध कराना और समाज में सेवा की भावना को बढ़ावा देना है। इसके अलावा, मंदिर के तहत शिक्षा केंद्र भी चलाए जाते हैं, जहाँ गरीब बच्चों को निःशुल्क शिक्षा प्रदान की जाती है।

इस मंदिर में भक्तों के लिए भी विभिन्न सुविधाएँ उपलब्ध हैं। मंदिर परिसर में एक प्रसादम (भोजनालय) है, जहाँ शुद्ध शाकाहारी भोजन परोसा जाता है। यह भोजन सर्वप्रथम भगवान श्री कृष्ण को अर्पित किया जाता है और फिर भक्तों को वितरित किया जाता है। इसके अलावा, मंदिर में एक पुस्तकालय भी है, जहाँ भक्ति साहित्य और धार्मिक पुस्तकें उपलब्ध हैं। यहाँ आने वाले भक्त इन पुस्तकों को पढ़कर भगवान कृष्ण के बारे में और अधिक जान सकते हैं। मंदिर में एक दुकान भी है, जहाँ भक्ति संबंधित सामान जैसे मूर्तियाँ, माला, किताबें और सीडी आदि खरीदे जा सकते हैं। यह दुकान भक्तों के लिए बहुत उपयोगी है, क्योंकि यहाँ से वे अपने घर के लिए धार्मिक सामान ले जा सकते हैं।

यह मंदिर पर्यटन की दृष्टि से भी अत्यंत महत्वपूर्ण है। चूंकि यह मंदिर अपनी सुंदर वास्तुकला और शांत वातावरण के लिए जाना जाता है। अतः यहाँ आने वाले प्रत्येक पर्यटक मंदिर की सुंदरता और आध्यात्मिक वातावरण में एक सुखद एहसास का अनुभव करते हैं। मंदिर के आसपास का क्षेत्र भी बहुत सुंदर है, जहाँ भक्त और पर्यटक घूम सकते हैं और प्राकृतिक सौंदर्य का आनंद ले सकते हैं।

इस्कॉन मंदिर, भुवनेश्वर एक ऐसा स्थान है जहाँ धर्म, आध्यात्मिकता और संस्कृति का अद्भुत संगम देखने को मिलता है। यह मंदिर न केवल भक्तों के लिए एक पूजा स्थल है, बल्कि यह एक ऐसा केंद्र है जहाँ लोगों को जीवन के सही मार्ग पर चलने की प्रेरणा मिलती है। इस्कॉन मंदिर की यात्रा करने वाले हर व्यक्ति को यहाँ से शांति और आनंद की अनुभूति होती है। यह मंदिर भगवान कृष्ण की भक्ति और प्रेम का प्रतीक है, और यह सभी के लिए एक पवित्र स्थान है।



पखाल दिवस: ओडिशा की संस्कृति को समर्पित एक विशेष दिन

पखाल दिवस हर साल 20 मार्च को ओडिशा में मनाया जाता है, जो ओड़िया संस्कृति के पारंपरिक व्यंजन “पखाल भात” को समर्पित एक विशेष दिन है। ओडिशा में पखाल भात तैयार करने का एक अनूठा और पारंपरिक तरीका है। पके हुए चावल को पानी में भिगोकर छोड़ दिया जाता है, जिससे वह हल्का खमीरयुक्त (फर्मेंटेड) हो जाता है। अगले दिन, जब इसमें हल्की खटास आ जाती है तब यह “पखाल भात” के रूप में तैयार होता है, जिसे दही, सरसों, हरी मिर्च, अदरक और अन्य मसालों के साथ खाया जाता है। यूं तो पखाल को सालभर खाया जाता है लेकिन गर्मी के मौसम में इसकी उपयोगिता और अधिक बढ़ जाती है। यह गर्मी और उमस भरे मौसम में सुपाच्य और पौष्टिक माना जाता है।

यह दिन ओड़िया खानपान और परंपराओं को संजोने का कार्य करता है और स्वस्थ जीवनशैली को भी बढ़ावा देता है। ओडिशा में गर्मी अधिक होती है और पखाल शरीर को ठंडा रखने में मदद करता है। साथ ही, यह पाचन के लिए अच्छा होता है और शरीर को हाइड्रेट भी रखता है। पखाल दिवस के अवसर पर लोग विभिन्न प्रकार के पखाल तैयार करते हैं, जैसे सादा पखाल, बासी पखाल (रातभर भीगे चावल), जेहुंरी पखाल (छाछ और नींबू के साथ), और दही पखाल। इस दिन घरों और रेस्तरां में पारंपरिक ओड़िया भोजन परोसा जाता है, जिसमें पखाल के साथ साग, बैंगन भाजा, आलू चिप्स, बड़ी चुरा और मछली भुजिया शामिल होते हैं।

पखाल दिवस न केवल ओड़िया भोजन संस्कृति का उत्सव है, बल्कि यह पारंपरिक व्यंजनों को नई पीढ़ी तक पहुंचाने और स्वस्थ जीवनशैली को अपनाने का भी संदेश देता है। यह दिन अब सोशल मीडिया और विभिन्न आयोजनों के माध्यम से न केवल ओडिशा, बल्कि देश-विदेश में भी लोकप्रिय हो गया है।



राजभाषा अनुभाग की प्रमुख गतिविधियाँ

माननीय संसदीय राजभाषा समिति की आलेख एवं साक्ष्य उपसमिति द्वारा निरीक्षण:-

माननीय संसदीय राजभाषा समिति की आलेख एवं साक्ष्य उपसमिति द्वारा दिनांक 27.02.2025 को नराकास (कार्यालय), भुवनेश्वर के अध्यक्ष कार्यालय के रूप में इस कार्यालय तथा 6 अन्य सदस्य कार्यालयों के साथ विचार-विमर्श कार्यक्रम आयोजित किया गया। इसमें समिति द्वारा अध्यक्ष, नराकास को नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति तथा सदस्य कार्यालयों में राजभाषा नीति के उत्कृष्ट एवं संतोषजनक प्रयोग व कार्यान्वयन के लिए प्रमाणपत्र प्रदान किया गया।

राजभाषा कार्यान्वयन समिति की तिमाही बैठक:

प्रत्येक तिमाही की समाप्ति पर कार्यालय की राजभाषा कार्यान्वयन समिति की तिमाही बैठकें आयोजित की जाती हैं। विगत छमाही के दौरान दिनांक:29.10.2024 तथा दिनांक:22.01.2025 को प्रधान महालेखाकार की अध्यक्षता में राजभाषा कार्यान्वयन समिति की तिमाही बैठक आयोजित की गई जिसमें तिमाही प्रगति प्रतिवेदनों तथा कार्यालय में हिंदी के प्रगामी प्रयोग की समीक्षा की गई।

हिंदी कार्यशाला:

राजभाषा विभाग के निदेशानुसार कार्यालय के कर्मचारियों को हिंदी में आधिकारिक कार्य करने हेतु व्यावहारिक ज्ञान प्रदान करने के लिए तिमाही आधार पर हिंदी कार्यशाला आयोजित की जाती है। विगत छमाही के दौरान दो हिंदी कार्यशालाएँ, दिनांक: 27.11.2024 तथा 27.03.2025 को आयोजित की गई जिसमें कुल 09 अधिकारियों एवं 18 कर्मचारियों ने सहभागिता की।

हिंदी पखवाड़ा-2024 का आयोजन:

कार्यालय में दिनांक:14.09.2024 से दिनांक:27.09.2024 तक हिंदी पखवाड़ा मनाया गया। इस दौरान कार्यालय में हिंदी भाषी वर्ग हेतु 04 प्रतियोगिताएं तथा हिंदीतर भाषी वर्ग हेतु 04 प्रतियोगिताएं (हिंदी निबंध, हिंदी टिप्पणी एवं मसौदा लेखन, हिंदी अनुवाद एवं हिंदी कविता पाठ) आयोजित की गई तथा कार्यालय के कार्मिकों के बच्चों के लिए संयुक्त प्रतियोगिताएं आयोजित की गई। दिनांक 27.09.2024 को पखवाड़ा समापन समारोह के अवसर पर कवि सम्मेलन का आयोजन किया गया तथा कार्यालयीन हिंदी छमाही पत्रिका “तोशाली” के 107वें अंक का विमोचन किया गया।

अनुभागों का राजभाषा संबंधी निरीक्षण:

राजभाषा विभाग के वार्षिक कार्यक्रम के अनुसार वर्ष 2024-25 के दौरान कार्यालय के कुल 23 अनुभागों का निरीक्षण किया गया। इस दौरान अनुभागों को हिंदी में कार्य करने के लिए प्रोत्साहित किया गया तथा कामकाज में आने वाली कठिनाइयों को दूर करने का प्रयास किया गया ताकि भविष्य में हिंदी में टिप्पण एवं पत्राचार आसानी से किया जा सके।

हिंदी प्रशिक्षण:

कार्यालय के अधिकारियों/कर्मचारियों को हिंदी शिक्षण योजना, भुवनेश्वर केंद्र द्वारा आयोजित विभिन्न हिंदी प्रशिक्षण (प्रवीण, प्राज्ञ, पारंगत) और हिंदी टंकण/ हिंदी आशुलिपि प्रशिक्षण हेतु नामित किया जाता है। इस संबंध में विगत छमाही के दौरान सत्र जनवरी-मई-2025 के लिए अनिवार्य सेवाकालीन प्रशिक्षण हेतु इस कार्यालय के 12 कार्मिकों को प्रवीण, 07 कार्मिकों को प्राज्ञ तथा 01 कार्मिक को पारंगत प्रशिक्षण हेतु नामित किया गया। इसके अतिरिक्त 03 कार्मिकों को सत्र जनवरी से अगस्त, 2025 के लिए हिंदी शब्द संसाधन/ हिंदी टंकण के दीर्घकालिक प्रशिक्षण सत्र हेतु नामित किया गया।

अन्य कार्यालयीन गतिविधियाँ

सीएजी महोदय का दौरा :

माननीय श्री के. संजय मूर्ति, भारत के नियंत्रक महालेखापरीक्षक द्वारा दिनांक:10.03.2025 से 13.03.2025 के दौरान कार्यालय का दौरा किया गया।



सम्मेलन एवं बैठकें:

प्रधान महालेखाकार (लेखा एवं हकदारी) ओडिशा कार्यालय तथा वित्त विभाग, ओडिशा सरकार के संयुक्त प्रयास से दिनांक:25 फरवरी, 2025 को द्वितीय ट्रेजरी ऑफिसर्स सम्मेलन-2025 का आयोजन किया गया। उक्त बैठक में श्री डी. साहु, प्रधान महालेखाकार, ओडिशा, श्री सास्वत मिश्रा, प्रधान सचिव, वित्त विभाग, श्री रूप नारायण



दास, निदेशक (ट्रेजरी एवं इंस्पेक्शन निदेशालय), ट्रेजरी ऑफिसर एवं कार्यालय प्रधान महालेखाकार (लेखा एवं हक) के अन्य अधिकारी शामिल हुए। सम्मेलन कुल 05 सत्रों में आयोजित किया गया। जिसमें 1. ट्रेजरी लेखा, 2. ट्रेजरी निरीक्षण 3. लेखा समाधान 4. आईएफएमएस एसएनए एसपीएआरएसएच एवं जेआईटी एफ एस तथा 5. पेंशन एवं जीपीएफ के संबंध में आने वाली विभिन्न समस्याओं पर चर्चा की गई। सम्मेलन के सभी सत्र परस्पर बातचीत पर आधारित थे जिसमें राज्य के वित्तीय प्रबंधन को सुदृढ़ करने एवं विश्व स्तरीय बनाने के लिए कई महत्वपूर्ण निर्णय लिए गए।

आपदा प्रबंधन:

- वित्त वर्ष 2024-25 के दौरान अर्ध-वार्षिक संयुक्त आपदा प्रबंधन समिति की बैठक दिनांक 23.08.2024 तथा 08.01.2025 को आयोजित की गई।
- कार्यालय में अग्नि सुरक्षा और बचाव मॉक ड्रिल 26.04.2024 और 13.12.2024 को आयोजित की गई।
- कार्यालय के सभी इलेक्ट्रिकल टेलीफोन, इंटरनेट, सीसीटीवी आदि का निरीक्षण दिनांक 05.02.2025 को किया गया।



➤ महिला हित संवेदनशीलता:

- महिला कर्मचारियों के लिए रमा देवी लेडीज कॉमन रूम का उद्घाटन 2024 में किया गया।
- कार्यालय की महिला सदस्यों की शिकायतों के निवारण के लिए दिनांक 30.12.2024 को एक बैठक आयोजित की गई जिसकी अध्यक्षता सुश्री अभिरुचि, आईएएस (प्रशिक्षु) अधिकारी द्वारा की गई।
- कार्यालय की महिला कर्मिकों के लिए दिनांक 12.02.2025 को डॉ. अर्चना बारिक की उपस्थिति में महिला स्वास्थ्य और कल्याण कार्यक्रम आयोजित किया गया।



➤ विभागीय कैंटीन :

- कैंटीन में ब्रेकफास्ट, लंच एवं टिफिन की बुकिंग के लिए दिनांक: 05.03.2024 को दालमा (DALMA) एप्लीकेशन लांच किया गया जिसे सीएजी द्वारा अवार्ड भी प्रदान किया गया।
- चारों कार्यालयों के सभी अधिकारियों एवं कर्मचारियों के लिए ऑडिट वीक 2024 तथा नव-वर्ष 2025 के अवसर पर “बड़ा खाना” का आयोजन किया।

➤ स्वास्थ्य कैंप:

- कार्यालय में लेखापरीक्षा दिवस के दौरान 20 और 21 नवंबर 2024 को मधुमेह, पल्मोनरी और नेत्र की जांच हेतु शिविर आयोजित किया गया।
- कार्यालय में 5 से 7 फरवरी 2025 तक प्रजापिता

ब्रह्मकुमारी, ईश्वरीय विश्व विद्यालय द्वारा तनाव प्रबंधन पर कार्यक्रम आयोजित किया गया।

- कार्यालय के कर्मिकों के लिए दिनांक 10.02.2025 को कैंसर जागरूकता कार्यक्रम का आयोजन किया गया।

➤ खेल गतिविधियाँ:

- कार्यालय द्वारा क्रमशः अक्टूबर 2024 और फरवरी 2025 के दौरान दो आईए और एडी टूर्नामेंट, यानी बैडमिंटन और हॉकी का आयोजन किया गया।
- इस कार्यालय के श्री ध्रुव रावत और श्री कलगा जगदीश जैसे खिलाड़ियों ने सीएजी संगठन के लिए प्रशंसा अर्जित की। श्री रावत वर्तमान में मिश्रित युगल रैंकिंग में भारत के नंबर एक और युगल में नंबर दो वरीयता प्राप्त खिलाड़ी हैं और श्री जगदीश ने अखिल भारतीय सिविल सेवा बैडमिंटन टूर्नामेंट 2024-25 में एकल चैंपियनशिप जीती थी। इसके अलावा इस कार्यालय के श्री बिस्व रंजन सारंगी को हॉकी इंडिया द्वारा विभिन्न अंतरराष्ट्रीय हॉकी टूर्नामेंटों के लिए अंपायर के रूप में नामित किया गया है।

➤ सीएजी अवार्ड:

- दिनांक-16 नवंबर, 2024 को चतुर्थ ऑडिट दिवस के दौरान विभिन्न क्षेत्रों में किए गए उल्लेखनीय कार्यों के लिए भारत के नियंत्रक एवं महालेखापरीक्षक महोदय द्वारा कार्यालय को अवार्ड प्रदान किया गया।



सेवानिवृत्ति

क्रम सं.	नाम (श्री/ सुश्री/ श्रीमती)	पदनाम	सेवानिवृत्ति की तिथि
1.	टी प्रकाश राव	वरिष्ठ लेखा अधिकारी	31.10.2024
2.	रंजन कुमार साहू	सहायक लेखा अधिकारी	31.10.2024
3.	सिमांचल गौड़ा	सहायक लेखा अधिकारी	31.10.2024
4.	आशुतोष दास	सहायक लेखा अधिकारी	31.10.2024
5.	विंसेंट डुंगडुंग	पर्यवेक्षक	31.10.2024
6.	हेलेना मिंज	सहायक पर्यवेक्षक	30.11.2024
7.	मागुनी चरण स्वाई	वरिष्ठ लेखाकार	30.11.2024
8.	लिंगराज पाढ़ी	वरिष्ठ लेखाकार	30.11.2024
9.	प्रमोद किशोर महापात्र	वरिष्ठ लेखा अधिकारी	31.01.2025
10.	बसंत कुमार पंडा- II	वरिष्ठ लेखा अधिकारी	31.01.2025
11.	राजेंद्र कुमार बेहेरा	वरिष्ठ लेखा अधिकारी	31.01.2025
12.	ज्ञानरंजन सतपथी	सहायक लेखा अधिकारी	31.01.2025
13.	थियोडोर एक्का	सहायक पर्यवेक्षक	31.01.2025
14.	अशोक कुमार स्वाई	सहायक पर्यवेक्षक	31.01.2025
15.	सरमजित सिंह	सहायक पर्यवेक्षक	31.01.2025
16.	श्रीधर जेना	पर्यवेक्षक	28.02.2025
17.	दिलीप कुमार राउत	सहायक पर्यवेक्षक	28.02.2025
18.	अंजन कुमार मोहंति	वरिष्ठ लेखा अधिकारी	31.03.2025
19.	मेघराय सोरेन	सहायक पर्यवेक्षक	31.03.2025
20.	परमेश्वर कालो	सहायक पर्यवेक्षक	31.03.2025
21..	बैधर हंसदा	वरिष्ठ लेखाकार	31.03.2025

“तोशाली” पत्रिका परिवार सभी सेवानिवृत्त सहकर्मियों के स्वस्थ एवं दीर्घायु जीवन की कामना करता है।

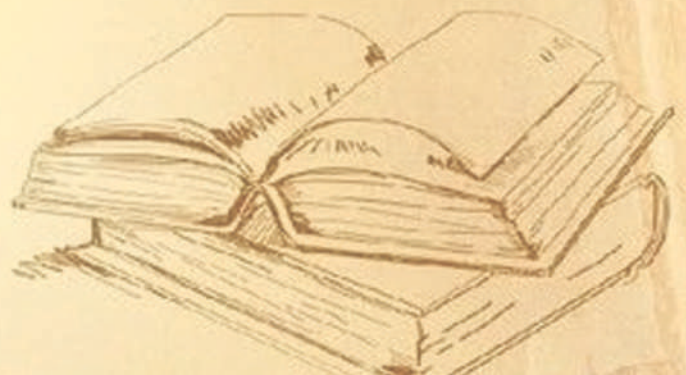


राष्ट्रकवि मैथिलीशरण गुप्त

मूल नाम	:	मैथिलीशरण गुप्त
जन्म	:	3 अगस्त 1886, झाँसी, उत्तर प्रदेश
निधन	:	12 दिसंबर 1964, झाँसी, उत्तर प्रदेश
उल्लेखनीय कृति	:	भारत-भारती
भाषा	:	खड़ी बोली एवं ब्रज भाषा
उपलब्धियाँ	:	महाकाव्य साकेत के लिए मंगला प्रसाद पारितोषिक, पद्म भूषण सम्मान एवं राष्ट्रकवि की उपाधि

मैथिलीशरण गुप्त का जन्म 3 अगस्त 1886 को झाँसी के निकट चिरगाँव में हुआ था। रोचक किस्सा है कि उनके बचपन का नाम “मिथिलाधिप नंदनशरण” था लेकिन विद्यालय के रजिस्टर में इतना बड़ा नाम अट नहीं रहा था तो इसे “मैथिलीशरण” कर दिया गया। धनाढ्य वैश्य घराने में जन्म लेने के कारण नाम में “गुप्त” शामिल हो गया। वह बचपन में “स्वर्णलता” नाम से छप्पय लिखते थे, फिर किशोरावस्था में “रसिकेश”, “रसिकेंदु” आदि नाम भी प्रयोग करने लगे। उन्होंने अनुवाद का कार्य “मधुप” नाम से किया और “भारतीय” और “नित्यानंद” नाम से अँग्रेज़ सरकार के विरुद्ध कविताएँ लिखी। साहित्य जगत उन्हें “ददा” पुकारता था। उनकी कृति “भारत-भारती” (1912) स्वतंत्रता संग्राम के समय व्यापक प्रभावशाली सिद्ध हुई थी और इसी कारण महात्मा गाँधी ने उन्हें “राष्ट्रकवि” की पदवी दी थी।

हिंदी साहित्य के इतिहास में वह खड़ी बोली के प्रथम महत्वपूर्ण कवि माने जाते हैं। पद्य-रचना की ओर उनका झुकाव “लघु सिद्धांत कौमुदी” पढ़ते हुए हुआ। आरंभ में ब्रजभाषा में काव्य-सृजन किया और संस्कृत छंदों में अनेक अन्योक्तियाँ लिखी। राष्ट्रीय चेतना, धार्मिक नैतिकता और मानवीय उत्थान उनके काव्य का उत्स है। उनकी कृतियों में देश का अतीत, वर्तमान और भविष्य बोलता है। वह मानववादी, नैतिक और सांस्कृतिक काव्यधारा के विशिष्ट कवि थे। उनके दो महाकाव्य, बीस खंडकाव्य, सत्रह गीतिकाव्य, चार नाटक और गीतिनाट्य, दो संस्मरणात्मक गद्य-कृतियाँ, चार निराख्यानक निबंध और अठारह अनूदित रचनाएँ उपलब्ध हैं।



प्रमुख कृतियाँ

महाकाव्य : साकेत (1931)

खंडकाव्य : रंग में भंग (1909), जयद्रथ-वध (1910), शकुंतला (1914), पंचवटी (1915), किसान (1916), सैरंध्री (1927), वकसंहार (1927), वन वैभव (1927), शक्ति (1927), यशोधरा (1932), द्वापर (1936), सिद्धराज (1936), नहुष (1940), कुणाल गीत (1941), कर्बला (1942), अजित (1946), हिडिंबा (1950), विष्णुप्रिया (1957), रत्नावली (1960), उर्मिला (अप्रकाशित, 1908-09)

कथाश्रित निबंध काव्य : पत्रावली (1916), विकट-भट (1928), गुरुकुल (1928), अर्जन और विसर्जन (1942), काबा (1942), प्रदक्षिणा (1950), युद्ध (1950), कवि श्री (1955), नल दमयंती (अप्रकाशित, 1910-11)

निबंध-काव्य : भारत-भारती (1912), हिंदू (1927), राजा-प्रजा (1956), विजय पर्व (1963)

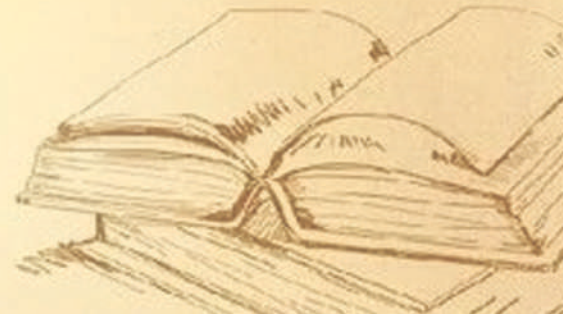
पद्य नाटक : अनघ, दिवोदास, पृथ्वीपुत्र, जयिनी, लीला, गद्य नाटक : तिलोत्तमा, चंद्रहास, उद्धार

संस्कृत से अनूदित : स्वप्न वासवदत्ता, गीतामृत, दूत घटोत्कच, अविमारक, प्रतिमा, अभिषेक, उरुभंग आदि।

बांग्ला से अनूदित : विरहिणी ब्रजांगना, पलासी का युद्ध, वीरांगना, मेघनाद वध, वृत्र संहार उनके समस्त रचनाकर्म को “मैथिलीशरण गुप्त ग्रंथावली” के 12 खंडों में संकलित करने का प्रयास किया गया है।

उन्हें “साकेत” के लिए मंगला प्रसाद पारितोषिक प्रदान किया गया। राष्ट्रपति ने उन्हें राज्यसभा का सदस्य मनोनीत किया था। भारत सरकार ने उन्हें “पद्म भूषण” से अलंकृत किया। उनकी जयंती 3 अगस्त को हर वर्ष ‘कवि दिवस’ के रूप में मनाया जाता है।

ॐ ॐ ॐ



नर हो, न निराश करो मन को

मैथिलीशरण गुप्त

नर हो, न निराश करो मन को
कुछ काम करो, कुछ काम करो
जग में रह कर कुछ नाम करो
यह जन्म हुआ किस अर्थ अहो
समझो जिसमें यह व्यर्थ न हो
कुछ तो उपयुक्त करो तन को
नर हो, न निराश करो मन को

सँभलो कि सुयोग न जाए चला
कब व्यर्थ हुआ सदुपाय भला
समझो जग को न निरा सपना
पथ आप प्रशस्त करो अपना
अखिलेश्वर है अवलंबन को
नर हो, न निराश करो मन को

जब प्राप्त तुम्हें सब तत्त्व यहाँ
फिर जा सकता वह सत्त्व कहाँ
तुम स्वत्त्व सुधा रस पान करो
उठके अमरत्व विधान करो
दवरूप रहो भव कानन को
नर हो न निराश करो मन को

निज गौरव का नित ज्ञान रहे
हम भी कुछ हैं यह ध्यान रहे
मरणोत्तर गुंजित गान रहे

सब जाए अभी पर मान रहे
कुछ हो न तजो निज साधन को
नर हो, न निराश करो मन को

प्रभु ने तुमको दान किए
सब वांछित वस्तु विधान किए
तुम प्राप्तस करो उनको न अहो
फिर है यह किसका दोष कहो
समझो न अलभ्य किसी धन को
नर हो, न निराश करो मन को

किस गौरव के तुम योग्य नहीं
कब कौन तुम्हें सुख भोग्य नहीं
जान हो तुम भी जगदीश्वर के
सब है जिसके अपने घर के
फिर दुर्लभ क्या उसके जन को
नर हो, न निराश करो मन को
करके विधि वाद न खेद करो

निज लक्ष्य निरंतर भेद करो
बनता बस उद्यम ही विधि है
मिलती जिससे सुख की निधि है
समझो धिक् निष्क्रिय जीवन को
नर हो, न निराश करो मन को
कुछ काम करो, कुछ काम करो।

दिनांक : 27.02.2025 को माननीय संसदीय राजभाषा समिति की आलेख एवं साक्ष्य उप-समिति के साथ विचार-विमर्श कार्यक्रम





हिंदी पखवाड़ा समापन के दौरान “तोशाली” पत्रिका के 107 वें अंक का विमोचन करते हुए अधिकारीगण



हिंदी पखवाड़ा समापन समारोह के दौरान पुरस्कार वितरण कार्यक्रम



हिंदी पखवाड़ा, 2024 के दौरान आयोजित प्रतियोगिताएं